“MAA” OMWATI COLLEGE OF EDUCATION HASSANPUR (PALWAL)

AFFILIATED CRS UNIVERSITY, JIND

B.ED – 2nd YEAR (2021-22)

NOTES PAPER- I

KNOWLEDGE AND CURRICULUM

MAA OMWATI EDUCATION TRUST

DELHI

E-mail: moce.principal@maaomwati.com

Unit-I

ज्ञान एवं शिक्षा

(Knowledge and Education)

ज्ञान
(Knowledge)

आजकल ज्ञान का महत्त्व बहुत ज्यादा है। जिसका ज्ञान (जानकारी) जितना ज्यादा और नवीनतम (upto date) है वह उतना ही ज्यादा दूसरों को प्रभावित करता है। वह जहाँ भी होता है, या जहाँ भी जाता है वहीं उसे पहचान मिलती है। शिक्षा व्यक्ति को पर्याप्त ज्ञान देती है, उसे नवीनतम करती है तथा ज्ञान की दृष्टि से गम्भीर बनाती है। इसलिए क्या हम मान लें कि शिक्षा का ज्ञान-लक्ष्य ही सर्वाधिक महत्त्वशाली है? इस प्रश्न का उत्तर हमें बड़ी सावधानी से खोजना होगा, क्योंकि जीवन में केवल ज्ञान ही तो अकेले महत्त्वपर्ण नहीं है। ज्ञान के अतिरिक्त भी तो व्यक्तित्व के अनेक आयाम हैं जो किसी भी दृष्टि से दूसरों से कम नहीं हैं, हाँ, यह सही है कि जीवन के सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक पक्षों का ज्ञान भी तभी हो सकता है जब व्यक्ति ने वह ज्ञान अर्जित किया हो। इस रूप में, शिक्षा के ज्ञान-लक्ष्य को हम एक 'आधार लक्ष्य' मान सकते हैं। **सुकरात** ने कहा, *"जो सच्चा ज्ञान प्राप्त कर लेता है वह सर्वगुणसम्पन्न हो जाता है।"*

"One who had true knowledge should not be other than virtuious."

ज्ञान का अर्थ एवं परिभाषाएँ
(Meaning and Definitions of Knowledge)

ज्ञान वास्तविकता के प्रति जागरूकता एवं विशेष पहलुओं के प्रति समझ है। यह वास्तविकता के लिए तर्क की प्रक्रिया द्वारा ज्ञात की गयी शुद्ध जानकारी है। ज्ञान की परम्परागत अवधारणा यह है कि ज्ञान के लिए निम्न तीन बातों का होना आवश्यक है—

(1) सत्य (Truth)—सत्य ज्ञान की नींव है। कोई भी (Truth) असत्य चीज ज्ञात करना ज्ञान की श्रेणी में नहीं आता। इसका सत्य होना अति आवश्यक है।

महान दार्शनिक **अरस्तू** का कथन है, *"किसी ऐसी वस्तु के विषय में कहना जो असत्य है, या उसके विषय में वह कहना जो वह वास्तव में नहीं है—असत्य है। किसी भी वस्तु के विषय में यह कहना जैसी वह है या किसी वस्तु के विषय में जो वास्तव में नहीं यह कहना कि वह नहीं है, सत्य है।"*

"To say of something which is that it is not, or to say of something which is not that it is, is false. However, to say something which is that it is, or of something which is not that it is not, is true."

(2) आस्था (विश्वास) (Belief)—ज्ञान का दूसरा महत्त्वपूर्ण बिन्दु विश्वास है क्योंकि व्यक्ति उस वस्तु या विषय के बारे में कुछ भी नहीं जान सकता है जिसमें उसकी आस्था न हो। किसी वस्तु के विषय मे यह कहना—"मैं अमुक वस्तु को जानता हूँ परन्तु मैं यह नहीं मानता कि वह सत्य है, असत्य होगा।"

Scanned with CamScanner

(3) **तर्कसंगतता** (Justification)—तर्कसंगतता किसी भी ज्ञान की तीसरा महत्त्वपूर्ण गुण है। कोई ज्ञान तब ही सत्य माना जाता है अथवा उसमें लोगों का विश्वास केवल तब ही बनता है जब वह बात तर्कसंगत हो।

Meacham (1990) defines knowledge as an "awareness of the fallibility of knowing and is a striving for a balance between knowing and doubting."

विभिन्न परिभाषाओं का अवलोकन करने पर एक बुद्धिमान व्यक्तित्व में निम्नलिखित सामान्य विशेषताएँ देखने को मिलती हैं—

(1) जीवन के बारे में गहन जानकारी तथा अनिश्चितताओं की स्वीकृति। *—Baltes and Staudinger*

(2) आत्म-श्रेष्ठता (Self-transcendence) *—Orwell, Kramer and Others*

(3) दूसरों के प्रति अपने संवेगों, संज्ञान एवं सहानुभूति में सन्तुलन। *—Bassett, Sternberg*

(4) सर्वमान्य हितों के लिये समर्पित प्रयास।

(5) नये अनुभवों का स्वतन्त्र व खुलनापन।

ज्ञान की विशेषताएँ
(Characteristics of Knowledge)

ज्ञान की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(1) ज्ञान धन की तरह है, जितना एक मनुष्य को प्राप्त होता है, वह उतना ही ज्यादा पाने की इच्छा करता है।

(2) ज्ञान सत्य तक पहुँचने का साधन है।

(3) धर्म की भाँति ज्ञान को भी जानने के लिए अनुभव करने चाहिए।

(4) ज्ञान प्रेम तथा मानव स्वतंत्रता के सिद्धान्तों का ही आधार है।

(5) एक बार प्राप्त किया गया ज्ञान अपनी ही सीमाओं से परे रोशनी प्रदान करता है।

(6) तथ्य और मूल्य ज्ञान के ढाँचे का आधार बनते हैं।

(7) ज्ञान कदम से कदम मिलाकर चलता है, उछलता नहीं है।

(8) ज्ञान कभी समाप्त नहीं होता।

(9) सूचना ज्ञान का स्रोत है।

(10) ज्ञान शक्ति है।

(11) ज्ञान दूसरों को प्रदान करने के लिए विद्यमान रहता है।

(12) ज्ञान समय का परिणाम है।

(13) ज्ञान की कोई सीमा नहीं है।

(14) ज्ञान तीन वस्तुओं की ओर संकेत करता है—सत्य, सिद्ध और ईश्वर।

(15) ज्ञान शिक्षा का बहुत उत्तम साधन है।

(16) यह व्यक्ति को जीवन में समायोजन करना सिखाता है।

(17) यह व्यक्ति और समाज की समृद्धि तथा विकास में सहायक होता है।

(18) यह नैतिकता को संतुष्ट करता है। इसका मूलमंत्र है 'स्वयं को जानो'।

(19) यह व्यक्ति को विचारशील बनाता है।

ज्ञान के प्रकार
(Type of Knowledge)

प्रमुख रूप से ज्ञान के निम्नलिखित तीन प्रकार होते हैं—

(1) आगमनात्मक ज्ञान (A Posteriori Knowledge)

(2) प्रयोगमूलक ज्ञान (Experimental Knowledge)

(3) प्रागानुभव ज्ञान (A Priori Knowledge)

(1) आगमनात्मक ज्ञान (A Posteriori Knowledge)—इस प्रकार का ज्ञान हमारे अनुभव तथा निरीक्षण पर आधारित है। जॉन लॉक (John locke) इस प्रकार के ज्ञान के प्रवर्तक थे। उनके मतानुसार बालक का मन जन्म के समय कोरी पट्टी (Tabula Rasa) के समान होता है। जैसे-जैसे उसे अनुभव मिलते जाते हैं, उस पट्टी पर लेखन होने लगता है। इससे तात्पर्य है कि ज्ञान अनुभवों द्वारा वृद्धि करता रहता है। सीखने के लिए समग्र अनुभव प्रदान करने चाहिए। इस प्रकार के ज्ञान में अलौकिक का कोई स्थान नहीं है।

(2) प्रयोगमूलक ज्ञान (Experimental Knowledge)—ज्ञान प्रयोग द्वारा प्राप्त होता है, ऐसी प्रयोजनवादियों (Pragmatists) की धारणा है। एक विचार को अभ्यास में परिवर्तित करने का प्रयास करना एवं उसे प्रयास के परिणाम से जो फल प्राप्त होते हैं उनसे सीखना चाहिए। इस धारणा के अनुसार ज्ञान कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है जिसे हम समझें कि यह अनुभव या निरीक्षण से अन्तिम रूप से समझी जा सकती है, जबकि हम ऐसी विधियों का प्रयोग करते हैं जैसे आगमन। यह तो कुछ ऐसी वस्तु है जो अनुभव में सक्रिय होती है, एक साधन की भाँति जो अनुभव को सन्तोषपूर्ण ढंग से आगे की ओर ले जाती है।

(3) प्रागानुभव ज्ञान (A Priori Knowledge)—ज्ञान स्वयं प्रत्यक्ष की भाँति समझा जाता है—'Knowledge is self-evident'। सिद्धान्त जब समझ लिये जाते हैं, सत्य पहचान लिये जाते हैं, तब उन्हें निरीक्षण, अनुभव या प्रयोग द्वारा प्रमाणित करने की आवश्यकता नहीं होती। इस विचारधारा के प्रवर्तक दार्शनिक काण्ट (Kant) थे। उनके अनुसार, सामान्य सत्य अनुभव से स्वतन्त्र होने चाहिए, उन्हें स्वयं में स्पष्ट व निश्चित होना चाहिए। गणित का ज्ञान प्रागानुभव ज्ञान समझा जाता है।

ज्ञान के सिद्धान्त
(Theories of Knowledge)

ज्ञान के सिद्धान्त ज्ञान के प्रकारों पर आधारित हैं; जैसे—

(1) आधुनिक सिद्धान्त (Empirical Theory)—प्रायोगिक सिद्धान्त इन्द्रियांगों के द्वारा अनुभवों की सहायता से प्राप्त किए गए ज्ञान पर आधारित है। यह ज्ञान का ऐसा सिद्धान्त है जो ज्ञान को प्राप्त करने में इन्द्रियों के सहयोग पर बल देता है। सबसे अधिक प्रायोगिक व्यक्ति शायद दार्शनिक तथा अध्यापक है। हम गणित तथा भौतिक विज्ञान के सिद्धान्तों का सार्वभौमिक तथा विश्वस्त ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं और यह केवल तथ्य का ज्ञान और केवल तथ्यों के प्रारूप तथा क्रमबद्ध संगठन का ज्ञान है।

मध्ययुग में अंग्रेज दर्शनशास्त्री जॉन लॉक (John Locke) ने अनुभववाद को पुनः चेतना प्रदान करने के लिए इस तथ्य पर बल दिया कि जन्म के समय मनुष्य का मन एक सपाट स्लेट की भाँति होता है जिन पर अनुभवों की सहायता से कुछ भी लिखा जा सकता है और इसके पश्चात् एक अन्य अंग्रेज दार्शनिक ह्यूम ने भी यह कहकर उसका अनुगमन किया कि मानव का मस्तिष्क उसकी संवेदनाओं का जोड़ है। इस प्रक्रिया में मनुष्य की आनुवंशिकता, बौद्धिकता तथा सांस्कृतिक संरचना कोई योगदान नहीं करते।

(2) तर्कवाद का सिद्धान्त (Rationalism Theory)—तर्कवाद यह निश्चित करता है कि तर्क ही ज्ञान का एकमात्र स्रोत है। इन्द्रियों के द्वारा केवल कच्चा माल प्रदान किया जाता है जिसको आकार देने का कार्य तर्क के द्वारा किया जाता है। कच्चे माल का स्वयं में कोई ज्ञानात्मक मूल्य नहीं होता। वह तब तक मृतक रहेगा

Scanned with CamScanner

जब तक इसे तर्क के छूने से रोशन न किया जाए। मृतक सामग्री को दिए जाने वाले विभिन्न रंग तथा आ… तर्क पर निर्भर करते हैं। यूनानियों ने प्लेटो को तर्कवाद का पिता माना जाता है। वास्तविकता विचारों में… मस्तिष्क में है, शुद्ध प्रकार में है। इसके अतिरिक्त जो कुछ भी है वह केवल दिखाई देने में है। वास्तविक संस… तथ्य में है जिसे विचारों की सहायता से मस्तिष्क में बनाया जाता है; अतः तर्कवादी के लिए फूल भी उतना… सुन्दर है जैसा कि उसका विचार है। फूल में स्वयं में कोई जन्मजात सौन्दर्य नहीं होता।

(3) संवेद विवेकपूर्ण सिद्धान्त (Sense Rationalisation Theory)—अरस्तु ने पूर्ण अनुभववाद त… पूर्ण तर्कवाद को स्वीकार नहीं किया यद्यपि उसका यह मानना था कि चेतना तथा तर्क ज्ञान के निर्माण… आवश्यक रूप से सहयोगी है। चेतन सामग्री की क्षमता को तर्क के द्वारा वास्तविक बनाया जाता है और… प्रकार हमारे पास विचारों, तथ्यों, सिद्धान्तों तथा ज्ञान प्रणाली का विस्तृत स्वरूप होता है। **कान्ट** (Kant)… विचारों में, हम अनुभव के साथ ज्ञान के उद्देश्य के लिए कार्य आरम्भ कर सकते हैं, परन्तु अनुभव स्वतः… विचारों में, हम अनुभव के साथ ज्ञान के उद्देश्य के लिए कार्य आरम्भ कर सकते हैं, परन्तु अनुभव स्वयं में… ज्ञान प्रदान नहीं करते। इसमें ज्ञान के उद्देश्य के लिए कार्य आरम्भ कर सकते हैं, परन्तु अनुभव स्वयं में… ज्ञान प्रदान नहीं करते। इसमें ज्ञान को रूप देने के लिए तर्क की आवश्यकता होतीहै। यही विचार शैक्षिक प्रक्रिया… प्रदान नहीं करते। इसमें ज्ञान को रूप देने के लिए तर्क की आवश्यकता होतीहै। यही विचार शैक्षिक प्रक्र… मस्तिष्क तथा चेतना दोनों के प्रशिक्षण के कार्य करते हैं। शिक्षण कौ… में लागू होता है। आधुनिक विद्यालय मस्तिष्क तथा चेतना दोनों के प्रशिक्षण के कार्य करते हैं। शिक्षण कौ… मस्तिष्क तथा चेतना की सहायता से ज्ञान प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करता है ताकि वे स्व… जीवन व्यतीत कर सकें।

(4) योग का सिद्धान्त (Yogic Theory)—भारतीय विचारकों के प्रतिनिधि के रूप में पत… (Patanjali) का योग विश्व के दार्शनिक कार्यों में सबसे प्रमुख है। इसके अनुसार शरीर तथा मन ऐसे तत्वों… बने हैं। जो उत्तेजना के स्रोत बनते हैं। ये केवल आत्मा के लिए विद्यमान हैं जो कि अटल सत्य है और… प्रभाव उसी क्षण दिखाई देता है जब आत्मा स्वयं को अनुभव करती है तथा स्वतंत्र हो जाती है। मस्तिष्क… एक प्रमुख विशेषता है कि यह व्यग्र/चंचल है, इसके साथ-साथ इसमें अज्ञानता/अविद्या है जो सभी कार… तथा मानसिक विचलनों की जड़ है। योग का उद्देश्य इस मानसिक चंचलता को नियंत्रित करना है तथ… मस्तिष्क को एक बिन्दु पर केन्द्रित करना है और सभी बुराइयों की जड़ अज्ञानता को जड़ से खत्म करन… यह केवल वैराग्य की चेतना के विकास से सम्भव है और इसके लिए कुछ ऐसी शारीरिक तथा मान… क्रियाएं करवाई जाएं जिससे केन्द्रीयकरण की सहायता से मानसिक संचेतना को उच्च स्तर तक ले जाय… सकें। जब एक योगी इस उच्च स्तर को प्राप्त करता है तो वह व्यक्ति तथा वस्तु (मैं तथा तुम) दोनों के ब… सब कुछ भूल जाता है।

ज्ञान के स्रोत
(Sources of Knowledge)

ज्ञान के प्रमुख स्रोत निम्न प्रकार है—

(1) इन्द्रिय अनुभव (Sensory Experience)

(2) साक्ष्य (Testimony),

(3) तर्कबुद्धि (Reason),

(4) अन्तःप्रज्ञा (Intuition),

(5) सत्ता आधिकारिक ज्ञान (Authoritative Knowledge)

विश्वास
(Belief)

क्रेच और क्रेचफील्ड के अनुसार, *"विश्वास एक व्यक्ति के संसार के किसी भी पहलू के स… प्रत्यक्षीकरण और बुनाव का एक स्थायी संगठन है। क्रेच और क्रेचफील्ड ने आगे लिखा है कि विश्वास… वस्तु के अर्थों का नमूना है। यह एक वस्तु के बारे में एक व्यक्ति के ज्ञानात्मक विषयों की सम्पूर्णता…*

"A belief is an enduring organization of perceptions and cognitions about some aspect of an individual world... A belief is a pattern of meanings of a thing, it is the totality of the individual's cognition about the thing."

—*Crutch and Kretchfield*

विश्वास का महत्त्व
(Importance of Belief)

विश्वासों का महत्व निम्न प्रकार है—

(1) व्यक्ति को विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में किस प्रकार का व्यवहार करना है, सोचना नहीं पड़ता है और विभिन्न सामाजिक परिस्थितियाँ भी व्यक्ति को नयी नहीं लगती है।

(2) एक समाज के सभी व्यक्तियों को एक जैसे विश्वास हस्तांतरित होते है। समाज के सामाजिक जीवन की दृष्टि से विश्वास ही एकरूपता उत्पन्न करते है।

- ज्ञान के विस्मरण का क्या अर्थ है?
- ज्ञान की प्रमाणिकता का क्या आधार है?
- ज्ञान की प्रक्रिया में कौन सी भूलें सम्भव है?
- क्या हमारा ज्ञान निश्चित है अथवा केवल अनुभूति और आस्था से हम उसे निश्चित मानते है?
- कुछ विश्वासों को अन्य विश्वासों से अधिक प्रामाणिक क्यों माना जाता है?
- ज्ञान के विभिन्न प्रकारों में क्या अन्तर है?
- ज्ञान का विज्ञान और दर्शन से क्या सम्बन्ध है? इत्यादि।

इमेनुएल काण्ट एक जर्मन दार्शनिक थे जिन्होंने ज्ञानमीमांसा के क्षेत्र में एक स्थायी एवं महत्वपूर्ण …गदान किया है। उनकी विषय सामग्री, ज्ञान की प्रक्रिया, लक्ष्य, दशाएँ, प्रणालियाँ, प्रामाणिकता एवं भ्रान्तियाँ … ज्ञानमीमांसा के अन्तर्गत इन सब का विवेचन किया जाता है।

ज्ञानमीमांसा आगमन और निगमन तथा संश्लेषण एवं विश्लेषण विधियों का उपयोग करता है। …नमीमांसा सम्बन्धी समस्याओं के विषय में दार्शनिकों ने विभिन्न निष्कर्ष दिये हैं, जबकि यथार्थवादी दार्शनिकों … अनुसार ज्ञान वस्तु का ज्ञान है, आदर्शवादी दार्शनिक उसे प्रत्ययों का ज्ञान मानते हैं, जबकि कुछ ज्ञानशास्त्री …ह सोचते है कि वस्तु की उपस्थिति ज्ञान के लिए अनिवार्य है और इसलिए प्रत्येक ज्ञान ज्ञाता और ज्ञेय दोनों …ा ज्ञान है, दूसरों के अनुसार ज्ञेय का ज्ञान ज्ञाता के ज्ञान से भिन्न है। इस प्रकार ज्ञानशास्त्रीय समस्याओं को …र यथार्थवादी, प्रत्ययवादी, अनुभववादी, बुद्धिवादी और समीक्षावादी दार्शनिकों ने भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण …पनाये। ज्ञान की सम्भावना के विषय में अज्ञेयवादी, संशयवादी और रहस्यवादी दार्शनिक भिन्न-भिन्न …म्भावनाएँ बतलाते है। इन सभी ने ज्ञान के विभिन्न पहलुओं का विवेचन किया है।

विश्व के ज्ञान से सम्बन्धित समस्याएँ दर्शन का प्रमुख विषय बनी रही हैं। इसलिए ज्ञान-सम्बन्धी विवेचन … दर्शन (ज्ञानमीमांसा) का एक प्रमुख अंग है। इन विवेचनों का सम्बन्ध मुख्यतः निम्नलिखित चार प्रश्नों के …थ रहा है—

(1) ज्ञान क्या है?

(2) ज्ञान के साधन क्या है?

(3) ज्ञान की सत्यता-असत्यता कैसे निर्धारित की जाती है?

(4) विश्व सम्बन्धी हमारे ज्ञान में ज्ञाता-ज्ञेय के बीच सम्बन्ध किस प्रकार का होता है?

…ान का अर्थ (Meaning of Knowledge)

ज्ञान शब्द की कोई व्यापक परिभाषा देना कठिन है, क्योंकि दर्शनों की प्रत्येक विचारधाराओं ने अपने ढंग …ज्ञान की परिभाषा दी है। जिसका सम्बन्ध द्रव्य अथवा सत्य से होता है।

Scanned with CamScanner

ज्ञाता और ज्ञेय के पारस्परिक सम्बन्ध को ज्ञान माना जाता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक ज्ञान में एक ज्ञाता तथ एक ज्ञेय होता है और जब ज्ञाता का ज्ञेय के साथ इन्द्रियों के माध्यम से सम्पर्क होता है तो ज्ञेय के प्रदार्थ के सम्बन्ध में एक चेतना होती है और जिसका अस्तित्व है और उसके विशेष गुण है। इसी प्रकार की चेतना को ज्ञान की संज्ञा दी जाती है। ज्ञानेन्द्रियों से जो प्रत्यक्षीकरण तथा अनुभव होता है, उसे भी ज्ञान कहते है ज्ञान इन्द्रियों तक ही सीमित होता अपितु इन्द्रियों से परे भी अनुभूतियाँ होती हैं, उसे भी ज्ञान कहा जाता है।

आदर्शवाद चेतना को ज्ञान की संज्ञा देता है, जो ज्ञानेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों से परे अनुभूतियों से सम्बन्धित है, जबकि प्रयोजनवाद और प्रकृतिवाद ज्ञानेन्द्रियों के प्रत्यक्षीकरण को ही ज्ञान मानते हैं।

ज्ञान के सम्बन्ध में दो प्रमुख विचार हैं—

(1) वास्तविक ज्ञान का स्वरूप

(2) सत्य अथवा द्रव्य का ज्ञान

इनके समझने के लिए तीन बातों को समझना आवश्यक है—

(अ) ज्ञान का स्वरूप

(ब) ज्ञान की अवस्था

(स) ज्ञान का अन्य पक्षों से सम्बन्ध

ज्ञान के स्वरूप को मानसिक घटना तथा मनोवैज्ञानिक क्रिया; जैसे—जानना, करना और अनुभूति करना मानते हैं। यहाँ मनुष्य के तीन प्रकार के व्यवहार होते हैं। दार्शनिकों ने ज्ञान को समझने के लिए तार्किक प्रक्रिया का उपयोग किया है।

ज्ञान का सम्बन्ध किसी कार्य के करने की क्षमता से होता है; जैसे—पढ़ना, लिखना, बोलना, सीखना, तैरना आदि। ज्ञान का पक्ष वस्तु के गुणों से सम्बन्धित होता है। यह पक्ष कुछ प्रतिज्ञप्तियों से सम्बन्धित होता है यह प्रदर्शित करता है कि वास्तविक ज्ञान तब होता है जब उसको उस वस्तु को उसके वास्तविक रूप में दिखाया जावे (जैसे—किसी वस्तु को दिखाना) उदाहरणार्थ—यदि हम ताजमहल का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना चाहें तो हमें ताजमहल को आगरा जाकर वास्तविक रूप में देखना होगा और तभी हम उसका वास्तविक ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं क्योंकि इसमें हमारी सभी ज्ञानेन्द्रियाँ एवं कर्मेन्द्रियाँ सक्रिय रहती हैं। वास्तविक ज्ञान को ही स्वीकार करते हैं और उसमें कोई प्रतिज्ञप्ति नहीं होती, जबकि सत्य अथवा द्रव्य के ज्ञान में प्रतिज्ञप्तियों का विशेष महत्व होता है। प्रतिज्ञप्तियों एवं अवधारणाओं के बिना सत्य का ज्ञान नहीं किया जा सकता है।

भारतीय दर्शन के अनुसार ज्ञान का अर्थ

भारतीय दर्शन के अनुसार 'ज्ञान का अर्थ' समझने के लिए चार परिस्थितियों को बोध होना आवश्यक है। ज्ञान के सन्दर्भ में अनेक प्रश्न हैं जिनका अभी तक उत्तर देना शेष है। जिनके कारण ज्ञान की परिभाषाओं में सन्देह उत्पन्न होता है। ज्ञान की सैद्धान्तिक समस्या अधिक है क्योंकि सत्य का रूप सुनिश्चित होना चाहिए जिससे 'ज्ञान' की परिभाषा की जा सके। यह चार परिस्थितियाँ इस प्रकार हैं—

(1) सत्य और वस्तुनिष्ठता (Reality and Objectivity),

(2) ज्ञान की सार्थकता (Worth of Knowledge),

(3) ज्ञान की सत्यता (Truthfulness of Knowledge) तथा

(4) तार्किक प्रतिज्ञप्ति सत्यता (Truthfulness of Logical Proposition)।

इन परिस्थितियों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

(1) ज्ञान सत्य होना चाहिए, जिससे उसकी वस्तुनिष्ठता का आकलन किया जा सके।

(2) ज्ञान के अस्तित्व में कोई सन्देह नहीं होना चाहिए।

(3) ज्ञान की सत्यता की पुष्टि में कोई भी सन्देह नहीं होना चाहिए। इसके लिए तीन उप-परिस्थितियों की अवश्यकता होती है—

(अ) सम्बन्धित प्रतिज्ञप्तियाँ आनुभविक अनुभव तथा संवेदनाओं पर आधारित होनी चाहिए।

(ब) प्रतिज्ञप्तियों की पुष्टि की जा सके।

(स) ज्ञाता को प्रतिज्ञप्तियों की सत्यता में विश्वास होना चाहिए।

(4) तार्किक प्रतिज्ञप्ति भी सत्य होनी चाहिये।

भारतीय दर्शन के अनुसार चेतना को ज्ञान की संज्ञा दी जाती है। ज्ञानेन्द्रियों के अनुभव तक ही सीमित नहीं है अपितु इन्द्रियों से अनुभूतियों को भी ज्ञान मानते हैं। **कर्म योग, ज्ञान योग तथा भक्ति योग** ज्ञान के साधन हैं।

किसी प्रतिज्ञप्ति की सत्यता को जानने का क्या अर्थ है, इसके लिए कुछ परिस्थितियों का बोध आवश्यक है।

ज्ञान के सम्बन्ध में परिस्थितियाँ

प्रतिज्ञप्तियों की सत्यता के लिए चार परिस्थितियाँ आवश्यक होती है। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

(1) जब कोई प्रतिज्ञप्ति की अवधारणा होती है तब प्रतिज्ञप्ति सत्य होनी चाहिए, तभी वह ज्ञान का रूप लेती है। परिकल्पना की पुष्टि के बाद ही सिद्धान्त बनता है।

(2) अनेक प्रतिज्ञप्तियाँ सत्य हो सकती हैं, परन्तु उनकी वैधता की जानकारी नहीं होती है। इसीलिए जिन प्रतिज्ञप्तियों की सत्यता में विश्वास होता है उसे ज्ञान की संज्ञा देते हैं।

यहाँ पर प्रश्न उठता है कि क्या सत्य में विश्वास होना ही ज्ञान है? इसका उत्तर ना में है, क्योंकि विश्वास बदलता रहता है तथा प्रतिज्ञप्ति की सत्यता भी परिवर्तनशील है।

(3) किसी विश्व को बदलने के लिए कितने प्रमाणों की आवश्यकता है? अनेक प्रमाणों की सहायता से विश्वास को बदल सकते हैं। प्रमाणों की उपलब्धता सीमित नहीं है। यह कहा जाता है कि प्रतिज्ञप्ति की सत्यता के लिए पूर्ण प्रमाण की आवश्यकता होती है।

(4) ज्ञान का रूप सुनिश्चित नहीं है, क्योंकि ज्ञान वृद्धि की सम्भावना बनी रहती है। अनुसन्धान ज्ञान वृद्धि की प्रक्रिया मानी जाती है। नवीन अनुभव, अनुभूतियों से ज्ञान में वृद्धि होती रहती है। नवीन प्रतिज्ञप्तियों का प्रतिपादन होता है और उनकी पुष्टि होती रहती है।

अनुभवों को ज्ञान की संज्ञा देने में कठिनाई यह है कि इन्द्रियों से भ्रम भी होता है। मरुस्थल में जल भ्रम होता है। इसलिए विश्व का सम्पूर्ण ज्ञान सत्य नहीं होता है। पुष्टि तथा सत्यता के पश्चात् ही उसे ज्ञान की संज्ञा दी जा सकती है, परन्तु सभी प्रतिज्ञप्तियों तथा परिकल्पनों की पुष्टि हेतु प्रमाण मिलना सम्भव भी नहीं होता है। इस प्रकार मानवी सम्पूर्ण ज्ञान प्रामाणिकता पर आधारित नहीं होता है। ज्ञान आस्था तथा विश्वास से भी होता है जिसे भक्ति योग कहते हैं। प्रमाण की यथेष्टता भी निश्चित नहीं है कि प्रतिज्ञप्ति की पुष्टि हेतु यथेष्ट प्रमाण उपलब्ध है।

ज्ञान के स्रोत ✓
(Sources of Knowledge)

तार्किक ज्ञान प्रतिज्ञप्ति की सत्यता पर आधारित है। यहाँ पर यह स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि प्रतिज्ञप्ति की सत्यता के लिए बोध किस प्रकार होता है? ज्ञान स्रोत कितने होते है? सामान्यतः ज्ञान के चार प्रमुख स्रोत माने जाते हैं—

(1) अनुभवजन्य इन्द्रियों से प्रत्यक्षीकरण (Preception),

(2) तार्किक चिन्तन (Logical Thinking),

Scanned with CamScanner

(3) निर्णयों एवं स्वामित्व से (Judgement) तथा

(4) अन्तर्दृष्टि अथवा अन्त:प्रज्ञा (Intution)।

इनका विस्तृत विवरण निम्न प्रकार से है—

(1) अनुभवजन्य इन्द्रियों से प्रत्यक्षीकरण (Preception)—इन्द्रियों द्वारा जो अनुभव या प्रत्यक्षीकरण होता है वह ज्ञान का एक प्रमुख साधन है। हमारी पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं—आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा। इनके द्वारा क्रमश: देखकर, सुनकर, सूँघकर, स्वाद लेकर तथा स्पर्श कर हम सांसरिक वस्तुओं के बारे में तरह-तरह के ज्ञान प्राप्त करते हैं। ऐसे ज्ञान को प्रत्यक्ष ज्ञान कहा जाता है। ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा जो अनुभव प्राप्त होते हैं उनकी प्रामाणिकता भी आवश्यक होती है, क्योंकि अनुभवों में कभी-कभी भ्रम भी हो जाता है।

इन्द्रियानुभव के द्वारा ज्ञान के सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि प्रत्येक ऐसे ज्ञान में जो इन्द्रियानुभव के अलावा निर्णय की एक क्रिया निहित होती है और इस ज्ञान में जो भूल होती है वह इस निर्णय की भूल के चलते ही होती है। कोरा इन्द्रिय-प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं होता, बल्कि उसी आधार पर जब हम कुछ निर्णय करते हैं; जैसे—यह कुर्सी इसमें चार पैर हैं, आदि, तो ज्ञान इन निर्णयों के द्वारा ही निर्मित होता है।

इन्द्रियों द्वारा जो ज्ञान प्राप्त होता है उसकी विश्वसनीयता का आकलन किया जा सकता है, परन्तु उस ज्ञान की वैधता ज्ञात करना कठिन होता है। इसका अर्थ होता है कि ज्ञान की सत्यता की पुष्टि करना कठिन होता है।

(2) तार्किक चिन्तन (Logical Thinking)—तार्किक चिन्तन मनुष्य के अन्दर एक ऐसी योग्यता है जिसके बिना कोई भी ज्ञान सम्भव नहीं है। अनुभव द्वारा जो ज्ञान प्राप्त होता है उसमें वस्तुओं की उपस्थिति आवश्यक होती है, परन्तु जो ज्ञान अमूर्त है अथवा अवधारणाओं तथा प्रतिज्ञप्तियों पर आधारित है ऐसे ज्ञान का आधार तार्किक चिन्तन होता है। इन्द्रिय अनुभव के द्वारा रंग, स्वाद तथा गन्ध आदि से सम्बन्धित कुछ संवेदन प्राप्त कर लेते हैं, परन्तु जब वस्तुओं में भेद करने का प्रश्न आता है वहाँ हमें तर्क चिन्तन की आवश्यकता होती है। इसमें अमूर्त चिन्तन की प्रक्रिया निहित होती है। इस अर्थ में ज्ञान का आधार तर्क-बुद्धि है।

तर्कानुमान को प्राय: दो तरह का माना गया है—निगमनात्मक (Deductive) आगमनात्मक (Inductive)। निगमनात्मक तर्कानुमान का लक्षण यह है कि यदि वह वैध होगा तो उसके आधार-वाक्यों से निष्कर्ष अनिवार्यत: निकलेगा। दूसरे शब्दों में, निगमनात्मक तर्कानुमान में यदि आधार-वाक्य सत्य हो तो निष्कर्ष भी अनिवार्यत: सत्य होगा। यहाँ आधार-वाक्य तथा निष्कर्ष की सत्यता-असत्यता से तात्पर्य उनकी वास्तविक सत्यता-असत्यता से नहीं है। अत: जब हम कहते हैं कि आधार-वाक्यों के सत्य होने से निष्कर्ष अनिवार्यत: सत्य होगा तो इसका तात्पर्य सिर्फ इतना है कि यदि आधार-वाक्य सत्य हो अर्थात् यदि उन्हें सत्य मान लिया जाए तो निष्कर्ष को भी सत्यता अनिवार्यत: स्वीकार करनी होगी। निगमनात्मक तर्कानुमान का सम्बन्ध वैधता-अवैधता से होता है, सत्यता-असत्यता से नहीं। सत्य-असत्य प्रतिज्ञप्तियाँ होती हैं, निगमनात्मक तर्कानुमान तो केवल वैध या अवैध होता है। यही कारण है कि वैसा निगमनात्मक तर्कानुमान भी वैध हो सकता है जिसके आधार-वाक्य तथा निष्कर्ष सभी वास्तविक दृष्टि से असत्य हो और वैसा निगमनात्मक तर्कानुमान अवैध हो सकता है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि तर्क-बुद्धि के दो रूप हैं—

(अ) निगमन तर्क-बुद्धि—इस प्रकार के तार्किक चिन्तन में अनेक नियमों तथा सामान्यीकरण का उपयोग किया जाता है। आदर्शवाद में इस तार्किक चिन्तन का विशेष उपयोग किया जाता है। इस चिन्तन के अन्तर्गत हम किसी नियम या सामान्यीकरण से विशिष्ट की ओर बढ़ते हैं। इसमें प्रतिज्ञप्तियों की विशेष भूमिका रहती है; जैसे—सामान्यीकरण → विशिष्टीकरण

सभी मनुष्य मरणशील हैं—(सामान्यीकरण या नियम)

मोहन एक व्यक्ति है

∴ मोहन मरणशील है—(विशिष्टीकरण)

(ब) आगमन तर्क-बुद्धि—इसके अन्तर्गत सत्य की सम्भावना रहती है। इसका प्रयोग प्रकृतिवाद के अन्तर्गत किया जाता है। इस प्रकार का चिन्तन विशिष्ट से आरम्भ होकर सामान्यीकरण की ओर बढ़ता है और सत्यता की पुष्टि प्रमाणों के आधार पर की जाती है। इसमें परिकल्पनाओं की विशेषत: भूमिका होती है; जैसे—

विशिष्टीकरण → सामान्यीकरण

मोहन एक व्यक्ति है (विशिष्टीकरण)

मोहन मरणशील है

∴ सभी मनुष्य मरणशील हैं (सामान्यीकरण या नियम)

(3) निर्णयों एवं स्वामित्व से (Judgements and Mastery)—महापुरुषों के द्वारा जो कथन दिये जाते हैं वही ज्ञान का स्रोत होते हैं। कथनों तथा परिभाषाओं को ज्ञान के स्रोत के रूप में प्रयुक्त करते हैं, परन्तु ऐसे ज्ञान की सत्यता की परख करना कठिन होता है। इसके अतिरिक्त जो निर्णय लिये जाते हैं वह भी ज्ञान का स्रोत होते हैं। इस तरह के ज्ञान के लिए निम्नलिखित सावधानियाँ रखनी होती हैं—

(i) व्यक्ति को उस ज्ञान अथवा विषय का स्वामित्व होना चाहिए।

(ii) व्यक्ति को वास्तव में स्वामित्व की सक्षमता होनी चाहिए।

(iii) कथनों को जीवन में व्यावहारिकता तथा सत्यता होनी चाहिए।

(iv) ऐसे कथन प्राकृतिक तथ्यों के विपरीत नहीं होने चाहिए।

(v) व्यक्ति की अपेक्षा उसके कथन की सत्यता का आकलन करना महत्त्वपूर्ण होता है।

(vi) यदि अन्य महापुरुषों ने कथन का खण्डन किया है तो उसको ज्ञान का स्रोत नहीं मानना चाहिए।

(vii) उस व्यक्ति के कथनों में विरोधाभास नहीं होना चाहिए। यदि विरोधाभास है तो उस कथन को ज्ञान का स्रोत नहीं माना जाना चाहिए।

(4) अन्तर्दृष्टि अथवा अन्त:प्रज्ञा (Intution)—अन्तर्दृष्टि शब्द से ही प्रतीत होता है कि यह एक आन्तरिक बोध है, जिसमें ज्ञान के रूप में जो कुछ स्पष्ट होता है अथवा विदित होता है। इसके अन्तर्गत ज्ञानेन्द्रियों तथा तर्कचिन्तन की कोई भूमिका नहीं होती, इसके अन्तर्गत अचानक एक प्रकाश की ज्योति से मालूम पड़ता है, जिससे हमें बहुत कुछ बोध होता है। इस प्रकाश को ज्ञान की संज्ञा देते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अन्तर्दृष्टि या अन्त:प्रज्ञा हमारे अन्दर एक निहित सहज क्षमता है जो कभी अचानक रूप से क्रियाशील होकर हमें आलोकित करती है।

अन्त:प्रज्ञा के साथ आत्मनिष्ठता का ऐसा पुट सम्बद्ध है कि यदि इसे यथार्थ ज्ञान का साधन मान भी लिया जाए तो फिर ज्ञान में वस्तुनिष्ठता तथा सार्वजनिकता जैसी कोई चीज नहीं रह जायेगी। प्रत्येक व्यक्ति अपनी अन्त:प्रज्ञा के आधार पर किसी भी प्रतिज्ञप्ति 'p' को सत्यता का दावा करेगा और यह निर्धारित करना कठिन हो जायेगा कि कौन प्रतिज्ञप्ति सत्य है? और कौन असत्य है?

ज्ञान सम्बन्धी प्रमुख सिद्धान्त
(Some Theories Related to the Means of Knowledge)

ज्ञान के प्रमुख दो स्रोत—(1) ज्ञानेन्द्रियों के अनुभव तथा (2) तर्कचिन्तन माने जाते हैं। वास्तव में यही दो ज्ञान के स्रोत हैं। दोनों स्रोत समान रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। इनके विवेचन के लिए तीन सिद्धान्तों का उपयोग किया जाता है—

(1) बुद्धिवाद (Rationalism),

(2) अनुभववाद (Empiricism) तथा

(3) समीक्षावाद (Criticism)।

Scanned with CamScanner

2

सूचना तथा ज्ञान, विश्वास तथा सत्य, तर्क बुद्धि तथा विश्लेषण के बीच अंतर
[Distinction Between Information and Knowledge, Belief and Truth, Reasoning and Analysis]

सूचना तथा ज्ञान
(Information and Knowledge)

1. सूचना तथा ज्ञान के बारे में आप क्या जानते हैं? सूचना तथा ज्ञान के संबंध का वर्णन कीजिए। सूचना तथा ज्ञान में क्या अंतर है?
(What do you know about information and knowledge? Describe the relationship between information and knowledge. What is distinction between information and knowledge?)

उत्तर–**'सूचना' का अर्थ (Meaning of Information)**–'सूचना' (Information) शब्द को विभिन्न तरीकों से प्रयोग किया जाता है। दो शब्दों 'आंकड़ों' (Data) और 'सूचना' (Information) का बहुत प्रयोग किया जाता है जो कि आपस में सम्बन्धित होते हैं। आंकड़े (Data) कोई भी तथ्य (Fact), अवलोकन (Observation), अवधारणा (Assumption), नाम, समय, तिथि, भार, मूल्य, आयु, पुस्तक, अंक, प्रतिशत, ग्रेड आदि हो सकते हैं। आंकड़े किसी व्यक्ति की क्रिया का गुण (Attribute) होते हैं।

आंकड़ों का संक्षिप्त स्वरूप 'सूचना' (Information) है। आंकड़ों और सूचना में सम्बन्ध होता है। किसी सूचना-प्रणाली में डाली गई सामग्री (Input) आंकड़े (Data) कहलाती है। अतः सूचनाएं वे आंकड़े होती हैं जिन्हें किसी स्वरूप (Form) में उत्पन्न किया गया है तथा जो प्राप्तकर्ता (Receiver) के लिए उपयोगी होती हैं और तत्काल या भविष्य की क्रियाओं एवं निर्णयों के लिए कीमती होती हैं।

कोई भी सूचना या आंकड़े किसी भी बहस, गणना या निर्णय का आधार होते हैं। दूसरे शब्दों में 'सूचना' वह आंकड़े हैं जिसका अर्थ निश्चित होता है।

आंकड़े मूल तथ्य होते हैं जिन्हें किसी संस्था के ऐतिहासिक रिकार्ड के रूप में प्रयोग किया जाता है। दैनिक जीवन में हम आंकड़ों और सूचना को एक-दूसरे के लिए प्रयुक्त करते हैं।

सूचना वे आंकड़े हैं जिन्हें निर्णयों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। (Information is data which is used in decision making.)

Scanned with CamScanner

'सूचना' की विशेषताएँ (Characteristics of Information)–प्रत्येक सूचना का मूल्य (Value) होता है। इस मूल्य को कई कारक प्रभावित करते हैं। सभी कारक 'सूचना' की विशेषताएँ होती हैं जो कि निम्नलिखित हैं–

1. **उपलब्धता (Availability)**–कई बार कई सूचनाएँ पहले तो उपलब्ध नहीं होती, लेकिन बाद में उपलब्ध हो जाती हैं। बाद में उपलब्ध सूचनाएँ व्यक्ति के लिए नई होती हैं तथा व्यक्ति के लिए निर्णय लेने में बहुत लाभदायक सिद्ध होती हैं।
2. **उपयुक्त (Accuracy)**–सूचना बिल्कुल सही या उपयुक्त होनी चाहिए। गलत सूचना किसी व्यक्ति या संस्था को हानि पहुँचा सकती है।
3. **समयबद्धता (Timeliness)**–वांछित सूचना अति शीघ्रता से उपलब्ध हो जानी चाहिए। देर से उपलब्ध सूचना लाभकारी नहीं रहती।
4. **सम्पूर्णता (Completeness)**–केवल सम्पूर्ण सूचना ही लाभकारी हो सकती है। संगृहीत सूचना हर प्रकार से सम्पूर्ण होनी चाहिए। अपूर्ण सूचना भी हानिकारक हो सकती है।
5. **प्रस्तुतीकरण (Presentation)**–सूचना को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया जाना चाहिए। इससे सूचना का मूल्य बढ़ता है। सूचना को अर्थपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करने पर उसे अधिक प्रभावशाली और कीमती बनाया जा सकता है।

सूचना के स्तर (Levels of Information)–किसी भी संगठन में विभिन्न स्तरों पर भिन्न-भिन्न सूचनाएँ वांछित होती हैं। 'सूचना' के स्तर निम्नलिखित होते हैं-

1. **अन्तर्राष्ट्रीय सूचना (International Information)**–बड़े-बड़े संगठन अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की सूचना चाहते हैं। यह अन्तर्राष्ट्रीय सूचना राष्ट्रीय सूचना के अतिरिक्त वांछित होती है। वह बड़े-बड़े व्यापार-घरानों, विश्वविद्यालयों, शैक्षिक संस्थानों के लिए सत्य है। वे इंटरनेट के माध्यम से सूचनाएँ प्राप्त करते हैं।
2. **राष्ट्रीय सूचना (National Information)**–अन्तर्राष्ट्रीय सूचना की तरह राष्ट्रीय सूचना भी महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय सूचना के स्रोत हैं- शैक्षिक या व्यापारिक नेटवर्क, टी0वी0 पर आधारित कार्यक्रम, रिव्यूज (Reviews) या समाचार-पत्रों में प्रकाशित लेख।
3. **कारपोरेट सूचना (Corporate Information)**–इस प्रकार की सूचना स्वयं संगठन के बारे में होती है। इसे आमतौर पर कर्मचारियों तथा संस्था के विद्यार्थियों तक पहुँचाया जाता है।
4. **डिपार्टमेंटल सूचना (Departmental Information)**–सभी संगठन या संस्थाएँ विभिन्न विभागों में बंटे होते हैं। हर संस्था के लक्ष्य निर्धारित किये जाते हैं लेकिन उन्हें विभागों के अनुसार वर्गीकृत किया जाता है, ताकि उन लक्ष्यों को प्रभावी ढंग से अर्जित किया जा सके। सम्बन्धित विभागों को उत्तरदायित्व निर्धारित कर दिये जाते हैं।
5. **व्यक्तिगत सूचना (Individual Information)**–इस सूचना में संगठन के स्टाफ के सदस्यों और कर्मचारियों की सूचना शामिल होती है। इसमें व्यक्तिगत सूचना होती है, जैसे-निवास, वैवाहिक स्तर आदि। इसमें व्यावसायिक सूचनाएँ जैसे अनुभव, वेतन-स्तर आदि भी शामिल होते हैं।

शिक्षा व दर्शन के क्षेत्र में ज्ञान शब्द का प्रयोग बहुत अधिक किया जाता है। ज्ञान का दर्शन के साथ घनिष्ट संबंध है क्योंकि दर्शन का अर्थ है–ज्ञान के प्रति प्रेम (Love of knowledge) जीवन, जगत, आत्मा और परमात्मा आदि के विषय में वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना ही दर्शन का उद्देश्य है जैसा कि जॉन डीवी महोदय ने कहा है–

"दर्शन का मुख्य उद्देश्य है वास्तविकता का ज्ञान।"
(The primary aim of philosophy is knowledge of reality.)

दर्शन की तीन शाखाएँ हैं–

(i) तत्व मीमांसा (Metaphysics)
(ii) ज्ञान मीमांसा (Epistemology)
(iii) मूल्य मीमांसा (Axiology)

दर्शन की दूसरी शाखा ज्ञान मीमांसा के अंतर्गत ज्ञान के स्वरूप, विधियों तथा स्रोतों आदि की विवेचना की जाती है। अब हम सर्व प्रथम इस विषय पर विचार करेंगे कि दार्शनिक दृष्टि से ज्ञान का क्या अर्थ है?

ज्ञान का प्रत्यय/अवधारणा/अर्थ (Concept/Meaning of knowledge): ज्ञान की दार्शनिक अवधारणा को जानने के लिए इसका शाब्दिक अर्थ जानना आवश्यक है।

ज्ञान का शाब्दिक अर्थ (Etymological Meaning of knowledge): ज्ञान शब्द संस्कृत की ज्ञा धातु से बना है जो 'जानना' अर्थ में प्रयोग होती है। अंग्रेजी भाषा में इसके लिए प्रयुक्त **knowledge** शब्द भी To know से संबंध रखता है, जिसका संबंध भी 'जानने' से है। इस प्रकार स्पष्ट है कि 'ज्ञान' शब्द का संबंध 'जानकारी' के साथ है। किसी वस्तु अथवा विषय आदि के बारे में हमारा आरंभिक ज्ञान उनसे संबंधित सामान्य जानकारी अथवा सूचना पर आधारित होता है। हमें तथ्यों की समझ नहीं होती। आयु बढ़ने के साथ-साथ हमारी बौद्धिक क्षमताओं का विकास होता है और हमारा ज्ञान भी परिपक्व होता चला जाता है।

शब्दकोश में ज्ञान के अनेक अर्थ बताए गए हैं–

(i) **सूचना (Information)**–किसी भी प्रकार की जानकारी अथवा विषय से संबंधित जानकारी ज्ञान है।
(ii) **अधिगम (Learning)**–स्वयं के अनुभवों तथा प्रशिक्षण के द्वारा जो अधिगम होता है वह ज्ञान है।
(iii) **निश्चित विश्वास (Assured Belief)**–अपने अनुभवों व चिंतन के आधार पर व्यक्ति के जो निश्चित विश्वास बन जाते हैं वही ज्ञान है।
(iv) **ज्ञात (Known):** जो ज्ञात अर्थात् जाना हुआ है वह ज्ञान है।
(v) **प्रकाशित होना (Enlightenment)**–जिसका बोध हो गया अथवा जो व्यक्ति के मन में प्रकाशित हो गया वह ज्ञान है या जो मन को प्रकाशित कर दे वह ज्ञान है।

उपर्युक्त सभी अर्थों को दर्शन के संदर्भ में प्रयोग करते हुए कहा जा सकता है कि जीवन, संसार, आत्मा व परमात्मा आदि के विषय में जो ज्ञात है, प्रकाशित है, सूचित है तथा अपने अध्ययन व अनुभवों के आधार पर जो विश्वास हमने बनाए हैं वे सभी ज्ञान हैं। मनुष्य विचारशील प्राणी है। अपने मनन व प्रयोगों के आधार पर उसके पूर्व विश्वास टूट जाते हैं और नए विश्वास बनने लगते हैं। वह जीवन तथा जगत् आदि के बारे में नए निष्कर्ष निकालने लगता है। ये नवीन विश्वास व निष्कर्ष भी ज्ञान हैं।

ज्ञान की प्रकृति/स्वरूप (Nature of knowledge): यद्यपि इसकी प्रकृति के संबंध में अनेक दृष्टिकोण हैं पर इसके अर्थों के आधार पर कहा जा सकता है कि इसकी निम्नलिखित विशेषताएँ हैं–

1. बुद्धि ज्ञान का स्रोत है। इसके द्वारा ही ज्ञान की प्राप्ति होती है।
2. ज्ञानेन्द्रियाँ ज्ञान प्राप्ति का साधन है।
3. ज्ञान व्यक्ति के अनुभवों का परिणाम है।
4. ज्ञान व्यक्ति के अंतःकरण को प्रकाशित कर देता है।
5. इसका संबंध व्यक्ति द्वारा अपने व दूसरों के अनुभवों के आधार पर विकसित विश्वासों के साथ है।
6. विभिन्न विषयों से संबंधित सूचनाएँ या जानकारी भी ज्ञान का अभिन्न अंग हैं।

संक्षेप में ज्ञान का स्वरूप समन्वयात्मक है। यह केवल बौद्धिक, अनुभवात्मक या आध्यात्मिक नहीं है।

Scanned with CamScanner

ज्ञान तथा सूचना में अंतर

क्र.सं.	ज्ञान	सूचना
1.	ज्ञान एक विस्तृत अवधारणा है।	सूचना ज्ञान के समान विस्तृत अवधारणा न होकर संकीर्ण अवधारणा है।
2.	ज्ञान मात्र आंकड़े व तथ्य नहीं हैं।	सूचना मात्र आंकड़े व तथ्य होते हैं।
3.	ज्ञान के अंतर्गत तथ्यों की जानकारी को अर्थपूर्ण स्तर तक जानना आवश्यक है।	सूचना के अंतर्गत तथ्यों की जानकारी आवश्यक नहीं है।
4.	ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया में मानसिक परिवर्तन और मानसिक वृद्धि होती है।	सूचना प्राप्ति में किसी भी प्रकार के मानसिक परिवर्तन तथा मानसिक वृद्धि नहीं होती।

◆◆◆

विश्वास तथा सत्य
(Belief and Truth)

2. विश्वास तथा सत्य के बारे में आप क्या जानते हैं? विश्वास तथा सत्य में क्या सम्बन्ध है?
(What do you know about Belief and truth? What is relationship between belief and truth?)

अथवा

विश्वास तथा सत्य में क्या सम्बन्ध है? विश्वास तथा सत्य के बीच विभेद का वर्णन कीजिए।
(What is relationship between belief and truth? Describe the destination between belief and truth.)

उत्तर–विश्वास ज्ञान का ही रूप है। अपने अनुभवों व चिन्तन के आधार पर जो निश्चित विश्वास बन जाते हैं, उन्हें ज्ञान कहा जाता है अर्थात विश्वास ज्ञान में रूपान्तरित होता है, लेकिन विश्वास को ज्ञान में बदलने के लिए यह जरूरी है कि उसकी सत्यता का प्रमाण हो।"

विश्वास की परिभाषा *(Definition of Belief)*

1. ए.ड.वूजेल–ए.डी.वूजेल विश्वास को मानसिक क्रिया अथवा अवस्था न मानकर उसे वृत्ति मानते हैं। वूजेल का मानना है कि विश्वास के लिए प्रमाण का होना अनिवार्य है। क्योंकि कोई भी विश्वास अकारण या प्रमाण रहित नहीं होता। वस्तुतः जिस प्रमाण को हम विश्वास रहित समझते हैं, उसमें बात सिर्फ इतनी सी है कि जिस प्रमाण के आधार पर हम विश्वास करते हैं, उन प्रमाणों को दूसरों के सामने रखते हुए हिचकते हैं कि दूसरा व्यक्ति इस प्रमाण को मानेगा या नहीं।

2. रसेल के अनुसार–"विश्वास मानसिक और शारीरिक दोनों स्थितियों का प्रमाणित मेल है। रसेल का मानना है कि विश्वास मात्र मन या मात्र शरीर से सम्बन्धित नहीं है, बल्कि मानव संरचना की एक विशेष अवस्था है।"

विश्वास शब्द को वेबस्टर शब्दकोश में स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि "विश्वास किसी वस्तु की सत्यता की मानसिक स्वीकृति होती है। यह आवश्यक नहीं है कि निरपेक्ष रूप सत्य हो।" उक्त परिभाषा से तीन बातें स्पष्ट होती हैं––

1. विश्वास की स्थिति में निरपेक्ष सत्यता आवश्यक नहीं है।
2. विश्वास एक प्रकार की मानसिकता है।
3. यह मानसिकता किसी तथ्य को स्वीकार करने की है।

इस प्रकार ज्ञान की शास्त्रीय परिभाषा–प्रामाणिक सत्य विश्वास ही ज्ञान है, के अनुसार ज्ञान की तीन अनिवार्य शर्तें हैं–

1. ज्ञाता के मन में विश्वास होना–किसी विश्वास के बिना कोई ज्ञान नहीं हो सकता। अतः ज्ञाता के मन में विश्वास होना अत्यन्त आवश्यक है।

2. विश्वास का सत्य होना–वे विश्वास ही ज्ञान की श्रेणी में आते हैं जो सत्य भी हों। अतः विश्वास को ज्ञान की श्रेणी में लाने के लिए उसमें सत्यता का होना अनिवार्य है।

3. विश्वास को सत्य मानने के लिए उसके पास प्रमाण का होना–विश्वास को सत्य मानने के लिए प्रमाण का होना अत्यन्त जरूरी है। माना जा सकता है कि ज्ञान की परिभाषा देते हुए प्लेटो ने कहा है–"सत्य विश्वास के साथ-साथ अगर तार्किक प्रमाण भी हो हम उसे ज्ञान कह सकते है।

सत्य के सिद्धान्त (Theories of Truth)–विभिन्न स्रोतों से ज्ञान प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त नहीं है। यह जानना भी आवश्यक है कि ज्ञान सत्य है अथवा असत्य, सही है अथवा गलत, अच्छा है या बुरा। इस सत्य, सही अथवा अच्छे ज्ञान की परख अथवा जांच कैसे की जा सकती है? इस प्रश्न के उत्तर में इस ज्ञान को कैसे परखा जाए। जिस ज्ञान को हम प्राप्त करते हैं क्या वह वैध (Valid) है। उसके वैध होने के क्या प्रमाण हो सकते हैं? यह समस्या विज्ञान, धर्म तथा दर्शन शास्त्र में आज भी बनी हुई है और इस समस्या के समाधान हेतु विद्वान लगे हुए हैं। ज्ञान की सत्यता के सन्दर्भ में दार्शनिकों के मुख्यतः चार सिद्धान्त निम्न दिए गए हैं–

(1) स्वयं सिद्धि सिद्धान्त (Self Evidence Theory)
(2) अनुकूलतावादी सिद्धान्त (Correspondence Theory)
(3) व्यवहारवादी सिद्धान्त (Pragmatic Theory)
(4) सामंजस्यवादी सिद्धान्त (Coherence Theory)

(1) स्वयं सिद्धि सिद्धान्त (Self Evidence Theory)–इस सिद्धान्त के अनुसार ज्ञान स्वयं सिद्ध है, क्योंकि यह सीधा, सरल और स्पष्ट होता है। जो ज्ञान जितना सरल, सीधा, स्पष्ट है वह उतना ही अधिक सत्य है। इन गुणों के होने से सत्यता शीघ्र दिखलाई देने लगती है। उदाहरण के लिए गणित विशेषकर रेखागणित (Geometry) की स्वयं सिद्ध मान्यताओं को किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती। इस सिद्धान्त के मुख्य प्रवर्तक देकार्ते (Descarates) और लॉक (Locke) हैं। देकार्ते ने बौद्धिक अनुभवों की स्पष्टता और लॉक ने इन्द्रिय जन्य अनुभव के सरल प्रत्ययों (Simple Ideas) की स्पष्टता पर विशेष बल दिया और उन्हें सत्य ठहराया।

(2) अनुकूलतावादी सिद्धान्त (Correspondence Theory)–इस सिद्धान्त के अनुसार सत्य, ज्ञान अथवा निर्णय वह है जो वास्तविक वस्तु के अनुकूल है, सत्य तथ्यों पर आधारित है। तथ्यों का सत्य या असत्य कहना गलत है, क्योंकि तथ्य तो जैसे हैं वैसे ही रहेंगे। लॉक ने इस सिद्धान्त का समर्थन किया कि यदि ज्ञान वास्तविक वस्तुओं से मेल खाता है तो वह सत्य है। यदि विचार वस्तु स्थिति के अनुकूल है तो वे सत्य है और यदि वे प्रतिकूल हैं तो सत्य नहीं हैं। दूसरे शब्दों में तथ्यों की अनुकूलता ही सत्य की परीक्षा है। उदाहरण के लिए, एक अधिकारी अपने कर्मचारी को यह कहता है कि कुछ गुप्त दस्तावेज इस संस्था के बैंक के लॉकर में पड़े हैं। इस कथन की परीक्षा करने के लिए हमें तथ्यों का निरीक्षण करना पड़ेगा और इस जांच में यदि यह सिद्ध हुआ कि संस्था के गुप्त दस्तावेज बैंक के लॉकर में हैं तो उसका कथन सत्य है, नहीं तो असत्य है क्योंकि यह तथ्य के प्रतिकूल है। सत्य की इस परीक्षा हेतु तथ्यों को स्वस्थित, स्वतन्त्र तथा वास्तविक मानना पड़ेगा और यह भी देखना होगा कि उनका अनुभव या परीक्षण माध्यम से सत्यापन किया जा सकता है या नहीं। यथार्थवादी अनुकूलता के सिद्धान्त के आधार पर सत्य की परख करते हैं।

Scanned with CamScanner

(3) व्यवहारवादी सिद्धान्त (Pragmatic Theory)–व्यवहारवादियों के अनुसार सत्य ज्ञान वह है जो व्यवहार में उपयोगी हो। अतः सत्य ज्ञान की परीक्षा उसकी उपयोगिता में है। जब मनुष्य के व्यवहार द्वारा अर्थात् निरीक्षण-परीक्षण द्वारा किसी निर्णय या ज्ञान को परख लिया जाता है, तब ही वह सत्य निर्णय या ज्ञान कहा जाता है। बिना परीक्षण के किसी निर्णय (ज्ञान) को सत्य निर्णय नहीं कहा जा सकता। (A judgement is made true by being verified apart from verification, it connot be said to be true or erroneous. —James)

प्रसिद्ध अमरीकी दार्शनिक जेम्स और डीवी इस निरीक्षण-परीक्षण पर विशेष जोर देते हैं। डीवी का कथन है "सत्य का अर्थ केवल एक ही अर्थात् परीक्षित, इसके अतिरिक्त सत्य का कोई अन्य अर्थ नहीं है।" ("The true means the verified and means nothing else.")

उदाहरण–किसी मकान के कोने में वास्तव में रस्सी है या साँप है, जमीनी दरार है या तेल की धार, इस बात का निर्णय उस कोने में जाकर वस्तुतः से उस वस्तु को टटोलने से ही हो सकेगा। इसी प्रकार दिन के समय, किसी दृश्य की क्षितिज पर जो मृगतृष्णा का जल दिखाई दे रहा है वह वास्तव में चमकती हुई रेत है। इस बात का ज्ञान व्यावहारिक अनुभव (Practical Experience) से ही होगा। इस प्रकार के अनुभवों के आधार पर ही अमरीकी व्यावहारवादी दार्शनिकों ने इस बात पर बल दिया कि सत्य अथवा ज्ञान की जांच कथित सत्य के मानव जीवन पर प्रभाव अथवा उपयोगिता देखने पर ही की जा सकती है। इसको व्यवहारवादी सिद्धान्त भी कहते हैं। ये व्यवहारवादी इस बात में विश्वास नहीं करते कि सत्य नित्य है और स्थिर है। उनका कहना है कि परम सत्य का कोई अर्थ नहीं है। उनके लिए सत्य परिवर्तनशील है और सत्य का सम्बन्ध मानव जीवन से है। जीवन में कोई भी अन्तिम सत्य नहीं होता। सत्य, समय, स्थान, काल और व्यक्ति के साथ बदलता रहता है। जैसे जो बात आज सत्य है, वो कल सत्य न हो, जो बात भूत में सत्य थी वो आज न हो, जो तुम्हारा आज साथी है वह कल आपका साथी न रहे। अर्थात् सत्य परिवर्तनशील है और विकास के साथ-साथ आगे बढ़ता है। सत्य जीवन व्यवहार से उत्पन्न होता है और मनुष्य के जीवन में सहायक होता है। (Truth originates from practical life of man and is helpful for him in his life.) इस सिद्धान्त के प्रवर्तक विलियम जेम्स, जॉन डीवी और शिलर हैं। इस सिद्धान्त की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि सत्य को इसमें सापेक्ष माना जाता है। मानव जीवन, समाज, राष्ट्र और विश्व की परिस्थितियां बदलती रहती हैं और कथनों, विचारों की सत्यता भी सापेक्ष है। जो विचार अथवा कथन जो कल सत्य थे, वे आज सत्य नहीं हैं, और जो विचार और कथन वर्तमान में सत्य माने जा रहे हैं हो सकता है कि भविष्य में सत्य न माने जाएं। जब तक कोई वचन या कथन काम करता है, तब उसे सत्य माना जाएगा। इस प्रकार जेम्स ने भी कहा है कि, "सत्य वह है जो काम करे।" (Truth is that which Works.)

(4) सामंजस्यवादी सिद्धान्त (Coherence Theory)–आदर्शवादियों ने इस सिद्धान्त को प्रतिपादित किया। इस सिद्धान्त के अनुसार विचार या ज्ञान के सत्य होने की कसौटी विचार जगत में सामंजस्यमय होना है। हेगेल (Hegal) तथा उसके अनुयायी ब्रैडले (Bradley) बोसांके (Bosanquet), जायसी (Joyce) आदि इस मत के समर्थक हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार सम्बन्धित घटनाओं और वस्तुओं के सन्दर्भ में देखने से हमें ज्ञान का सही स्वरूप मालूम हो सकता है। प्रोफेसर ब्रैडले का कथन है, "सत्य अन्तर्सम्बन्धित सामंजस्य इकाई है।" ("Truth is an inter related coherent whole.") ज्ञान का क्षेत्र जितना व्यापक (Comprehensive) होगा उतना ही हमें यह अवसर मिलेगा कि हम अनुभव से प्राप्त ज्ञान का विश्व के ज्ञेय ज्ञान भण्डार से सामंजस्य करें। यदि हमारा ज्ञान विश्व के ज्ञान के विपरीत पाया जाता है, तो हो सकता है कि गलती हमारी हो। हां, कभी-कभी प्रतिभाशाली अनुसंधानकर्ता यह भी सिद्ध कर दिखाते हैं कि उनकी खोज द्वारा प्राप्त सिद्धान्त सही है। ऐसी दशा में संसार के ज्ञान-भण्डार का संशोधन एवं विकास किया जाता है। आंशिक निर्णय का ज्ञान मनुष्य के शेष अनुभव से सामंजस्य हो जाना चाहिए। मानव-बुद्धि दो विरोधी तथ्यों या सत्यों को एक साथ ही स्वीकार नहीं कर सकती है। ध्यान रहे सामंजस्य दो प्रकार का होता है–

(i) तथ्यात्मक सामंजस्य (Factural Coherence)–इसमें किसी तथ्य की परीक्षा अन्य ज्ञात तथ्यों से सामंजस्य के आधार पर की जा सकती है।

(ii) तार्किक सामंजस्य (Logical Coherence)–इसमें उपस्थित विचार या निर्णय के अर्थ की तार्किक परीक्षा की जाती है। अर्थात् यह देखा जाता है कि वह कहां तक तर्कपूर्ण है। ज्ञान की सत्यता को परखने का मापदण्ड इस सिद्धान्त के अनुसार इस प्रकार है। जब यह है कि क्या एक निर्णय दूसरे निर्णय के अनुकूल है जिनको हम सत्य मानते हैं। दूसरे शब्दों में क्या कथनों में संगति है, यदि उनमें परस्पर संगति (Consisteney) है तो वे सत्य हैं और यदि कथनों में संगति की कमी है तो उनमें विरोधाभास (Contradiction) है, तो वे असत्य हैं। (Ideas are true if they are consistent and wrong if they are contradictory.) इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक समय पर मनुष्य का मानसिक संसार एक सत्यता की प्रणाली है जिसमें वे सारे विश्वास अथवा विचार विद्यमान रहते हैं, जिनको वे सत्य मान चुके हैं या उनकी पहले सत्यता सिद्ध हो चुकी है और यदि एक नया निर्णय प्रस्तुत होता है जिसकी सत्यता को परखने की जरूरत है तो उनका परीक्षण मापदण्ड यह है कि यदि वह उस सत्य की प्रणाली के अनुसार है तो वह सत्य है। उदाहरण–निम्न तीन कथनों के सम्बन्ध और उनमें से प्रत्येक के सत्य होने के स्वरूप पर निष्कर्ष इस प्रकार निकाला जा सकता है–

(i) गणित में ज्यामिति में त्रिभुज का उदाहरण।

(ii) यह रेखा-कृति तीन भुजाओं से बंधी है।

(iii) इस आकृति में तीन कोण हैं।

(iv) इस आकृति के तीन कोण दो समकोण के बराबर हैं।

इन कथनों में से कोई एक कथन अन्य दो कथनों के साथ हुए बिना सत्य नहीं हो सकता है। इसमें एक की सत्यता दूसरे दो कथनों की सत्यता से बंधी है। ये कथन आपस में सामंजस्य (Coherence) रखते हैं। यहां प्रत्येक कथन की सत्यता का अर्थ दूसरे दो कथनों का सामंजस्य (Coherence) के अलावा और कुछ नहीं है। इसी उदाहरण के आधार पर हम ज्यामिति में प्रमेय (Theorem) के सन्दर्भ में कह सकते हैं कि Theorem (प्रमेय) के सत्य होने का अर्थ उसका ज्यामिति की स्वयं सिद्ध कथनों से सामंजस्य है। इस सिद्धान्त को स्पष्ट करने के लिए एक अन्य उदाहरण और दिया जा सकता है।

आपके जन्म दिन की तारीख क्या है?

उदाहरण–19 जुलाई, 1991 और उस दिन शुक्रवार था। इस कथन के सत्य होने का क्या अर्थ लगा सकते हैं। इस कथन के सत्य होने का अर्थ इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं है कि 18 जुलाई, 1991 को गुरुवार था, 17 जुलाई, 1991 को बुधवार था, 16 जुलाई, 1991 को मंगलवार था। इस प्रकार एक कथन की सत्यता तीन कथनों से बंधी है। ये कथन आपस में सामंजस्य (Coherence) रखते हैं।

◆◆◆

तर्क बुद्धि तथा विश्लेषण
(Reasoning and Analysis)

3. तर्क बुद्धि तथा विश्लेषण के बारे में आप क्या जानते हैं? तर्क बुद्धि तथा विश्लेषण में क्या भेद है? (What do you know about reasoning and analysis? What is distinction between reasoning and analysis?)

उत्तर–तर्क बुद्धि (Reasoning)–तर्क ज्ञान का स्रोत है। तर्क में बुद्धि का सहारा लेकर अनुमान लगाया जाता है तथा इस क्रिया से ज्ञान प्राप्त होता है। बुद्धि का अर्थ कल्पना, सोचना, विचारना तथा तर्क करना है। तर्क मानसिक तथा बौद्धिक प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया के माध्यम से मनुष्य अपना कोई मत बनाता है या किसी निष्कर्ष पर पहुंचता है।

Scanned with CamScanner

तर्क बुद्धि विधि (Reasoning Method)—कई बार विद्यार्थी को ज्ञान प्राप्त करने के लि
अपनी बुद्धि का प्रयोग करना पड़ता है। वह तर्क-वितर्क करते हुए विवेक के साथ ज्ञान अर्जित करता है,
तर्क के आधार पर ज्ञान प्राप्त करने की दो विधियां हैं। ये दोनों विधियां ज्ञान अर्जित करने में बहुत उपयोगी
तथा सहायक होती हैं—

(a) आगमन विधि (Inductive Method or Egrule Method)
(b) निगमन विधि (Deductive Method or Ruleg Method)

(a) आगमन विधि (Inductive Method)—इस विधि के अन्तर्गत हम विशेष से सामान्य की
ओर तथा स्थूल से सूक्ष्म की ओर चलते हैं। इस विधि को इगरूल (Egrule) विधि भी कह
जाता है क्योंकि पहले उदाहरण दिए जाते हैं व बाद में नियम बनाए जाते हैं। इस विधि के
सहायता से नियमों व सिद्धान्तों का निर्माण किया जाता है। हम उदाहरण से प्रारम्भ करते
तथा उन उदाहरणों के आधार पर, बालक एक नियम का निर्माण करता है। यह विधि भूगोल,
गणित, विज्ञान, भाषा व्याकरण का ज्ञान प्राप्त करने के लिए बहुत सार्थक तथा उपयोगी है।

(b) निगमन विधि (Deductive Method)—यह आगमन विधि से बिल्कुल विपरीत है। इ
विधि में सामान्य से विशेष (From General to Particular) या नियम से उदाहरण की
ओर चलते हैं। इसलिए इसको रूलेग (Ruleg) विधि भी कहा जाता है क्योंकि इसमें नियम
का तो पहले से ही पता होता है तथा उस नियम की सत्यता को परखा जाता है। जैसे गणित
का एक नियम है कि एक त्रिभुज के तीनों कोणों का योग दो समकोण होता है। इसकी पुष्टि
किसी भी त्रिभुज के तीनों कोणों को मापकर दी जा सकती है कि यह कथन सत्य है, उचित
है तथा हम इसे स्वीकार कर लेते हैं। यह विधि अधिकतर विज्ञान, गणित तथा ज्यामिति आदि
विषयों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए बहुत उपयोगी है।

आगमन और निगमन विधियां एक-दूसरे की पूरक हैं। आगमन विधि द्वारा हम उदाहरणों तथा अनुभव
के आधार पर सूत्र का निर्माण करते हैं। जिस प्रकार आगमन खोज करने की विधि है, उसी प्रकार निगमन
विधि दूसरों की खोज को उपयोग में लाने की विधि है। कोई भी आगमन हमेशा निगमन पर समाप्त होता
है। वास्तव में गणित संबंधी प्रत्येक नवीन ज्ञान आगमन विधि के द्वारा विद्यार्थियों को देना चाहिए तथा
उसका अभ्यास निगमन विधि द्वारा करवाना चाहिए। गणित शिक्षक के लिए दोनों विधियों का ज्ञान होना
अति आवश्यक है। जो शिक्षक दोनों विधियों का उचित मिलान करके अपना शिक्षण कार्य करता है वो
एक सफल अध्यापक माना जाता है।

आगमन-निगमन विधि (Inductive-Deductive Method) यह विधि है जिसमें दोनों विधि
के दोषों को दूर करके, शिक्षण कार्य के लिए प्रयोग में लाया जाता है। इस प्रकार आगमन-निगमन वि
यह विधि है जिसमें सूत्रों एवं नियमों का प्रतिपादन आगमन विधि द्वारा किया जाता है और आगे का
अभ्यास निगमन विधि द्वारा दिया जाता है।

विश्लेषण *(Analysis)*

'विश्लेषण' शब्द का अर्थ है, "एकत्रित वस्तुओं को अलग-अलग करना।" इस विधि में हम "अज्ञात से ज्ञात" (Unknown to known) की ओर, "निष्कर्ष से कल्पना" (Conclusion to Hypothesis) की ओर पहुँचाने का प्रयास करते हैं। इस विधि में जो कुछ निकालना एवं ज्ञात करना होता है उससे आरम्भ करते हैं। इस विधि से समस्या में छुपी गुत्थियों को सुलझाने के लिए उसकी चीर-फाड़ की जाती है। सिद्ध करना है वह इस विधि में पहला पग (First Step) होता है फिर अन्य पगों के बारे में सोचा जाता है जो कि अज्ञात को किसी ज्ञात से जोड़ दे तथा इच्छित निर्णय प्राप्त हो जाए। उदाहरण के रूप में जैसे—यदि तथ्य 'क' सत्य दिया हुआ है तो इस विधि द्वारा हम इस प्रकार चलते हैं—

तथ्य 'ग' सत्य है अगर तथ्य 'ख' सत्य होगा।
तथ्य 'ख' सत्य है अगर तथ्य 'क' सत्य होगा।

अगर तथ्य 'क' सत्य है क्योंकि यह ज्ञात है इसलिए तथ्य 'ग' सत्य है।

चिंतन, अध्यापन एवं सीखने में विश्लेषण का विशेष महत्व है। इसके सम्बन्ध में थार्नडाइक (Thorndike) ने कहा है कि—"विश्लेषण मन का सर्वोत्तम बौद्धिक प्रदर्शन है।" इस विधि का प्रयोग जटिल समस्याओं को हल करने के लिए किया जाता है।

विश्लेषण विधि की कार्यविधि (Procedure) :

(i) **अज्ञात भाग की खोज**—दिए गए प्रश्न में अज्ञात भाग को सर्वप्रथम खोजते हैं।
(ii) **सिद्ध करना**—अज्ञात भाग के आधार पर सिद्ध करने वाले भाग का सत्यापन।
(iii) **संभावना**—इस सत्यापन से आगे क्या संभावना हो सकती है।
(iv) **ज्ञात भाग तक पहुँचना**—इस प्रकार हम ज्ञात भाग तक पहुँच जाते हैं।

इस प्रकार से क्या ज्ञात करना है, इस समस्या को तोड़ते हुए जो कुछ दिया होता है उस तक पहुँच जाते हैं। इसके लिए उदाहरणों का प्रयोग करते हैं।

यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने में विश्लेषण का महत्वपूर्ण योगदान होता है। विश्लेषण विधि की प्रकृति वैज्ञानिक है, तार्किक विश्लेषण, आलोचनाओं, स्पष्टीकरण एवं परीक्षण करके तथा उसमें जो तार्किक दोष हैं उन्हें छानने लाकर ऐसे ज्ञान की ओर ले जाता है जो वैज्ञानिक दृष्टि से यथार्थ का संकेत देता है।

अतः विश्लेषण का अर्थ है किसी भी वस्तु या समस्या को छोटे-छोटे टुकड़ों के रूप में प्रस्तुत करना अथवा उस वस्तु या समस्या का विच्छेदन करना। इस विधि द्वारा तर्क करने का सही रूप में विकास होता है क्योंकि प्रत्येक पद के तर्क का कारण भी प्रस्तुत करना होता है। इस विधि में "अज्ञात से ज्ञात की ओर" तथा "निष्कर्ष से अनुमान की ओर" बढ़ते हैं।

◆◆◆

Scanned with CamScanner

Unit – II
Western school of Philosophy → Idealism, Real[illegible] Naturalism, Pragmatism, Marxism and Exis[illegible] with special reference to the concepts of reality → knowledge and values their educational impl[illegible] for aim, contents and methods of Education.

10

प्रकृतिवाद

[NATURALISM]

प्रकृतिवाद यह मानता है कि "वास्तविक संसार भौतिक संसार है" (Materia[illegible] world is the real world.) इसी कारण हम प्रकृतिवाद को भौतिकवादी दर्शन भी कह[illegible] है। प्रकृतिवाद इस सृष्टि की रचना के लिए प्रकृति को ही उत्तरदायी मानता है। इसके [illegible] अनुसार सभी दार्शनिक समस्याओं का प्रत्युत्तर प्रकृति में निहित होता है (Nature alone contains the final answer to all philosophical problems.)।

दार्शनिक प्रकृति की व्याख्या सामान्यतया इस रूप में करते हैं कि प्रकृति साम[illegible] व स्वाभाविक रूप से विकसित होने वाली एक प्रक्रिया है। इस ब्रह्माण्ड की वह सभी वस्तुएँ जिनकी रचना या निर्माण में मनुष्य का शून्य योगदान है, वही प्रकृति है। इसके साथ ही कुछ दार्शनिक विचारधारा मानती हैं कि प्रकृति वह है, जो सर्वत्र तथा सर्वद[illegible] विद्यमान है और इसकी गतिविधियाँ निश्चित व प्राकृतिक नियमों द्वारा संचालित [illegible] नियन्त्रित होती हैं, साथ ही इनका यह भी विचार है कि प्रकृति में अनेक पदार्थ हो[illegible] है जिनके परस्पर संयोग से विभिन्न प्रकार की रचनायें जन्म लेती हैं। यह पदार्थ गतिशील व क्रियाशील होते हैं। इसी कारण प्रकृतिवाद, भौतिकवाद भी कहा जाता है। दर्शनशास्त्र में प्रकृति को ही सर्वोपरि सत्ता के रूप में स्वीकार किया जाता है परन्तु प्राकृतिक दार्शनिक विचारधारा बहुत ही व्यापक रूप में प्रकृति को स्वीकार करती है। एक ओर जो [illegible] प्रकृति को भौतिक जगत् के रूप में देखती है जिसका हम प्रत्यक्ष दर्शन और [illegible] हैं तो दूसरी ओर प्रकृति की व्याख्या जीव-जगत के रूप में भी की जाती है। [illegible] ही तीसरे अर्थ में देश-काल की सभी बातें भी प्रकृति में निहित होती हैं। प्रकृतिवाद की परिभाषा स्पष्ट करते हुए विभिन्न विद्वानों ने निम्न विचार अभिव्यक्त किये हैं–

1. **थामस एण्ड लैंग**–"प्रकृतिवाद आदर्शवाद के विपरीत मन को पदार्थ के अधीन मानता है और यह विश्वास करता है कि अन्तिम वास्तविकता भौतिक है आध्यात्मिक नहीं।"

(Naturalism is opposed to Idealism, subordinates mind to matter and holds that ultimate reality is material, not spiritual. –**Thomas and Lang**)

2. **जेम्स वार्ड**–"प्रकृतिवाद वह सिद्धान्त है जो प्रकृति को ईश्वर से पृथक करता है, आत्मा को पदार्थ के अधीन मानता है और अपरिवर्तनशील नियमों को सर्वोच्च स्थान देता है। इनके अनुसार प्रकृति ही वास्तविकता है जो अपने नियमों द्वारा संचालित होती है व उसी के द्वारा निर्धारित होती है।"

(Naturalism is the doctrine that separates nature from God, Subordinates spirit to matter and sets up unchangable laws as supreme, according to a[illegible]

thesis nature is real, propelled by her own laws and consequently determined by them. –**James Ward**)

3. ब्राइस के अनुसार–"प्रकृतिवाद एक प्रणाली है और जो कुछ आध्यात्मिक है, उसका बहिष्कार ही उसकी प्रमुख विशेषता है।"

(Naturalism is a system whose salient feature is the exclusion of whatever is spiritual. –**Bryce**)

4. आर. बी. पैरी–"प्रकृतिवाद विज्ञान का दार्शनिक विचार है जिसमें दार्शनिक समस्याओं के निराकरण हेतु विज्ञान के सिद्धान्तों का प्रयोग किया जाता है। यह आदर्शवाद के विपरीत है जो मन को पदार्थ के अधीन मानकर यह विश्वास करता है कि वास्तविक सत्ता, आध्यात्मिक न होकर पदार्थ में निहित होती है।"

("Naturalism is the philosophical generalization of science–the application of the theories of science to the problems of philosophy." Naturalism is but science in the role of philosophy, it is as opposed to idealism subordinates mind to matter and holds that ultimate reality is material not spiritual. –**R.B.Perry**)

प्रकृतिवाद की प्रमुख विशेषताएँ
(Chief Characteristics of Naturalism)

1. **प्रकृति ही वास्तविकता है** (Nature is Ultimate Reality)–प्रकृतिवाद प्रकृति को अन्तिम सत्ता मानता है और मानव प्रकृति पर अधिक बल देता है। यह इस बात पर विश्वास करता है कि वास्तविकता व प्रकृति (Reality and Nature) में कोई अन्तर नहीं है अर्थात् जो वास्तविक है, वह प्रकृति है या जो प्रकृति है, वह वास्तविक है। **हाकिंग** (Hocking) के शब्दों में, "प्रकृतिवाद इस बात को अस्वीकार करता है कि प्रकृति से परे, प्रकृति के पीछे या प्रकृति के अलावा कोई चीज अपना अस्तित्व रखती है, चाहे वह सांसारिक परिधि में हो या आध्यात्मिक परिधि में।" (Naturalism denies existence of anything beyond nature, behind nature other than nature. Such as the supernatural of other worldly.)

2. **मन व शरीर में कोई अन्तर नहीं है** (No Distinction between Mind and Body)–प्रकृतिवादी विचारधारा मन व शरीर में कोई अन्तर नहीं करती। वह यह मानती है कि मानव पदार्थ है, चाहे उसका मन हो या शरीर, दोनों ही इस पदार्थ का परिणाम हैं।

3. **वैज्ञानिक ज्ञान पर बल** (Emphasis on Scientific Knowledge)–प्रकृतिवाद यह भी मानता है कि वैज्ञानिक ज्ञान ही उचित ज्ञान होता है और हमारा प्रयास यह होना चाहिए कि हम इस वैज्ञानिक ज्ञान को जीवन से जोड़ सकें।

4. **वैज्ञानिक विधि द्वारा ज्ञान-प्राप्ति पर बल** (Emphasis on Acquiring Knowledge through Scientific Method)–प्रकृतिवाद के अन्तर्गत आगमन (Inductive)

Scanned with CamScanner

विधि द्वारा ज्ञानार्जन की चर्चा की गई है, साथ ही वह इस बात की भी चर्चा करती है कि ज्ञान-प्राप्ति का सर्वोचित तरीका निरीक्षण विधि है।

5. **ज्ञान-प्राप्ति हेतु इन्द्रियों की आवश्यकता** (Need of Senses for Acquiring Knowledge)—प्रकृतिवाद यह भी मानता है कि मानव इस जगत पर जो भी ज्ञान प्राप्त करता है, उसका माध्यम इन्द्रियाँ होती हैं, बिना इन्द्रिय सहयोग के मानव ज्ञानार्जन नहीं कर सकता।

6. **प्रकृति ही वास्तविक सत्ता** (Nature as a Big Power)—प्रकृतिवादी विचार यह भी मानता है कि इस संसार में सर्वोच्च शक्ति प्रकृति के हाथों में ही निहित रहती है और प्रकृति के नियम अपरिवर्तनशील हैं।

7. **मानव प्रकृति का ही अंग है** (Man as a Segement of Nature)—प्रकृतिवादी समाज के अस्तित्व के प्रति कोई आस्था नहीं रखते। इस कारण मनुष्य को समाज का अंग नहीं मानते। उनका विचार है कि मनुष्य प्रकृति का ही अभिन्न अंग होता है।

8. **मूल्य प्रकृति में ही निहित हैं** (Values Lie in Nature)—मूल्य का निर्धारण आदर्शवादी के अनुसार समाज द्वारा होता है जबकि प्रकृतिवादी यह मानते हैं कि मूल्य प्रकृति में ही विद्यमान रहते हैं और यदि मानव मूल्यों की प्राप्ति चाहता है तो उसे प्रकृति से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करना होगा।

9. **आत्मा और परमात्मा का कोई महत्त्व नहीं** (No Importance of Soul and God)—प्रकृतिवाद किसी आध्यात्मिक शक्ति में या आत्मा में विश्वास नहीं रखते। वह मानते हैं कि मानव की रचना प्रकृति के द्वारा हुई है और मनुष्य के शरीर का अन्त होते ही उसका चेतन तत्व भी समाप्त हो जाता है।

10. **भौतिक सुख की प्राप्ति** (To Achieve Material Prosperity)—प्रकृतिवाद मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य भौतिक सम्पन्नता की प्राप्ति मानता है। इस कारण मानव परिस्थितियों को अपने अनुकूल ढालता है। वह मानव को इस संसार का श्रेष्ठतम पदार्थ मानता है जो बुद्धि, तर्क व चिन्तन के कारण अन्य पशुओं से सर्वोपरि है।

11. **वैयक्तिक स्वतन्त्रता पर बल** (Emphasis on Individual Freedom)—प्रकृतिवाद यह भी मानता है कि व्यक्ति दुःखी इस कारण है चूँकि वह प्रकृति से दूर होता जा रहा है। व्यक्ति को इतनी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए कि वह प्रकृति से समीपता स्थापित कर सके।

प्रकृतिवाद के रूप (Forms of Naturalism)

1. **पदार्थ विज्ञान का प्रकृतिवाद** (Naturalism of Physical Science)—यह प्रकृतिवाद बाह्य प्रकृति के नियमों का अध्ययन करता है, साथ ही इस बात पर बल देता है कि इस जगत में जो भी भौतिक रूप में विद्यमान है, वही सत्य है। यह मनुष्य को पदार्थ जगत के नियमों के अनुसार समझने की चेष्टा करता है और मानव की भावना, चेतना, अन्तः-प्रकृति, आत्मा आदि अमूर्त विचारों पर विश्वास नहीं करता। इस बात में भी विश्वास करता है कि वास्तविकता पदार्थ में ही निहित होती है। (Reality is visualized as physical substance.) मानव को प्रकृतिवाद में गौण स्थान दिया गया

है और साथ ही मानव की अन्तः-प्रकृति से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है अतएव शिक्षा जो एक मानवीय क्रिया है, इससे प्रभावित नहीं होती है।

2. **यन्त्रवादी प्रकृतिवाद** (Mechanical Naturalism)—यह विचारधारा मनुष्य को एक यन्त्र के रूप में स्वीकार करती है और यह भी मानती है कि यह संसार एक प्राणिहीन यन्त्र है जो पदार्थ व गति से निर्मित होता है। इस वर्ग के प्रकृतिवादी जीवों की उत्पत्ति पदार्थ व गति से मानते हैं। इसके अनुसार मानव में चेतन तत्त्व की उपेक्षा रहती है और वह पशु समझ होती है। इस विचारधारा ने मनोविज्ञान के क्षेत्र में व्यवहारवाद (Behaviourism) को जन्म दिया। इसमें यह विश्वास किया जाता है कि मन तथा उसकी सभी क्रियायें व्यवहार के प्रकार मात्र हैं जिन्हें स्नायु संस्थान, ग्रन्थि संस्थान तथा माँसपेशी संस्थान की सहायता से समझा जा सकता है। यह नियति में विश्वास रखकर यह मानते हैं कि जगत में जो भी परिवर्तन होते हैं, वे सभी कारण-कार्य नियम से आबद्ध हैं।

3. **जीव-विज्ञान का प्रकृतिवाद** (Biological Naturalism)—यह विचारधारा विकास-सिद्धान्त पर आधारित है और इसी के आधार पर यह मानव की उत्पत्ति की व्याख्या करते हैं। यह विचारधारा मानव का विकास पशुओं से मानती है और मनुष्य के उस स्वभाव पर बल देती है जो उसे उसके पूर्वगामी वंशजों से प्राप्त हुआ है। मनुष्य व पशु में यह बहुत समानता मानती है और दोनों की मूल प्रवृत्तियों में भी बहुत समानता है। मानव के अस्तित्व के सम्बन्ध में यह दो विचार प्रस्तुत करती है। पहला जीवन के लिए संघर्ष का सिद्धान्त (Struggle for existence), दूसरा समर्थ का अस्तित्व का सिद्धान्त (Survival for the fittest) मानव को यह प्रकृति के हाथ का खिलौना मानते हैं। उसमें किसी प्रकार की इच्छा शक्ति जैसी कोई चीज नहीं होती। उसकी स्वतन्त्रता भी उसी प्रकार सीमित है जिस प्रकार अन्य प्राणियों की।

Scanned with CamScanner

प्रकृतिवाद तथा शिक्षा (Naturalism and Education)

प्रकृतिवादी विचारकों ने शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन किये। उनका मत था कि शिक्षा अध्यापक के हाथों से संचालित की जाने वाली प्रक्रिया नहीं है वरन् उसका संगठन व्यक्ति या बालक के अनुकूल किया जाना चाहिए। साथ ही यह विचारधारा नैतिक जगत की सार्थकता में विश्वास रखती है और आध्यात्मिक जगत की अवहेलना करती है। शिक्षा का कार्य किसी भी तथ्य का कृत्रिम ज्ञान देना नहीं है। वास्तविक ज्ञानार्जन प्रकृति पर निर्भर करता है। इस कारण प्रकृति का अनुकरण ही ज्ञान-प्राप्ति का सर्वोत्तम तरीका है। एडम्स (Adams) ने कहा है, "प्रकृतिवाद शैक्षिक सिद्धान्तों को क्रियान्वित करना या किताबी ज्ञान को प्रदान करने वाली कोई व्यवस्था नहीं है वरन् यह बालक के अनुकूल शिक्षा को ढालने की एक प्रक्रिया है जो बालक को कृत्रिम जीवन से प्राकृतिक जीवन की ओर ले जाती है। (It is back nature.) इसी कारण प्रकृतिवाद के अन्तर्गत प्राकृतिक नियमों को शिक्षा में अपनाने का प्रयास किया जाता है। इनका यह भी विश्वास है कि आधुनिक समाज के जटिल नियमों के फलस्वरूप ही मानव इस संसार में दुख भोगता है और यदि मानव को इनसे दूर रखा जाये तो उसके बहुत अधिक कष्टों का हम निवारण कर सकते हैं। शिक्षा के स्वरूप के सम्बन्ध में प्रकृतिवाद ने जो मुख्य विचार प्रस्तुत किये हैं, वह अग्र प्रकार हैं—

1. प्रकृति के अनुसार शिक्षा (Follow Nature is imparting Education)।
2. बालक शिक्षा का केन्द्र बिन्दु (Central Position of the Child in Education)।
3. प्रकृति की ओर लौटो (Back to the Nature)।
4. बालक की खुशहाली पर बल (Happiness Necessary for the Child)।
5. बालक की स्वतन्त्रता पर बल (Freedom Necessary for the Child)।
6. मूल-प्रवृत्तियाँ शिक्षा का आधार हैं (Instincts, the Basis of Education)।
7. इन्द्रियाँ, ज्ञान-प्राप्ति का मार्ग (Senses, the Gateways of Knowledge)।
8. पुस्तकीय ज्ञान का विरोध (Against Bookish Knowledge)।
9. बालक के विकास की विभिन्न अवस्थाओं की चर्चा (To Present the Different Stages of Child Development)।
10. शिक्षा में मनोविज्ञान की लोकप्रियता (Due Place to Psychology in Education)।

प्रकृतिवाद व शिक्षा के उद्देश्य
(Naturalism and Aims of Education)

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री **स्पेन्सर** (Spencer) ने मानव जीवन को समग्रता देने हेतु 5 प्रमुख क्रियायें बताई हैं—

(1) आत्म रक्षा,
(2) जीवन की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति,
(3) सन्तानोपालन,
(4) सामाजिक व राजनैतिक सम्बन्धों का निर्वाह,
(5) अवकाश का सदुपयोग।

प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री **रूसो** (Rousseau) ने कहा कि शिक्षा का उद्देश्य मानव को प्रकृति के अनुकूल जीवन व्यतीत करने हेतु योग्य बनाना है। शिक्षा के द्वारा हम मानव में कुछ नया उत्पन्न नहीं करते वरन् मानव की मौलिकता को बनाये रखने का प्रयास करते हैं और मानव संसर्ग के फलस्वरूप उसमें जो कृत्रिमता आ जाती है, उसका विनाश करने का प्रयास करते हैं। रूसो ने कहा कि "रोजमर्रा के व्यवहार को (समाज-सम्मत व्यवहार को) बदल डालो और सदा सर्वदा तुम्हारा कृत्य सही होगा।" रूसो ने हर स्थान पर सामाजिक संस्थाओं की अवहेलना की है। वह कहता है कि "मानवीय संस्थायें मूर्खता तथा विरोधाभास के समूह हैं।" परन्तु वह प्रकृति को ईश्वरीय सृष्टि मानता है और मनुष्य को ईश्वरीय कृति।

मैग्डूगल (McDougall) के धार्मिक सिद्धान्त के अनुसार, "शिक्षा का उद्देश्य मूलप्रवृत्तियों को रूपान्तरित करके समाजोपयोगी कार्यों में लगाना है अर्थात् शिक्षा के द्वारा मूलप्रवृत्तियों का दमन नहीं किया जाना चाहिए वरन् उनका विकास करके उन्हें उचित मार्ग पर लाना चाहिए।"

जैविकीय प्रकृतिवाद के अनुसार, शिक्षा के तीन प्रमुख उद्देश्य माने जाते हैं—

1. व्यक्ति को इस योग्य बनाना जिससे कि वह इस जगत में अपने आपको जिन्दा रख सके, जीवन के संघर्षों का मुकाबला कर सके तथा सफलता प्राप्त करने हेतु प्रयास कर सके।
2. शिक्षा का उद्देश्य है व्यक्ति को उसके वातावरण के साथ सामंजस्य स्थापित करने की योग्यता प्रदान करना।
3. **बर्नार्ड शॉ** के अनुसार, "शिक्षा का उद्देश्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक जातीय संस्कृति का संरक्षण, हस्तान्तरण व वृद्धि होना चाहिए। यह उद्देश्य आदर्शवादी उद्देश्य के निकट है।"

संक्षेप में, प्रकृतिवाद के अनुसार हम शिक्षा के निम्न उद्देश्य बता सकते हैं—

1. शिक्षा द्वारा बालक को प्राकृत जीवन व्यतीत करने हेतु तैयार करना।
2. बालक की प्राकृतिक शक्तियों का विकास करना।
3. बालक को इस प्रकार का ज्ञान व दक्षता प्रदान करना जिससे कि वह अपने पर्यावरण के साथ समायोजित हो सके।
4. मानव में उचित तथा उपयोगी सहज क्रियाओं को उत्पन्न करना अर्थात् मनुष्य में शिक्षा द्वारा ऐसी आदतों एवं शक्तियों का विकास करना जो मशीन के पुर्जे की भाँति अवसरानुकूल प्रयुक्त की जा सकें।
5. बालक को जीवन संघर्षों के योग्य बनाना।
6. जातीय निष्पत्तियों का संरक्षण करना व विकास करना।
7. बालक का आत्मसंरक्षण व आत्मसन्तोष की प्राप्ति।
8. मूलप्रवृत्तियों का शोधन एवं मार्गान्तरीकरण।
9. बालक के व्यक्तित्व का स्वतन्त्र विकास।

प्रकृतिवाद व पाठ्यक्रम
(Naturalism and Curriculum)

प्रकृतिवाद के शिक्षा के उद्देश्य के सम्बन्ध में **स्पेन्सर** ने पाँच उद्देश्यों की चर्चा

Scanned with CamScanner

की है। यह प्रकृतिवाद के पाठ्यक्रम को भी इन उद्देश्यों की पूर्ति का एक साधन मानते हुए कहते हैं—

उद्देश्य	पाठ्यक्रम
1. आत्मरक्षा	शरीर विज्ञान
2. जीवन की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति	रोजगार हेतु गणित, भौतिकी, रसायनशास्त्र व जैविकीय विज्ञान का अध्ययन
3. सन्ततिपालन	शरीर विज्ञान व मनोविज्ञान
4. सामाजिक व राजनैतिक सम्बन्धों का निर्वाह	सामाजिक अध्ययन के सभी विषय
5. अवकाश का सदुपयोग	साहित्य, संगीत, ललित कला, मनोविज्ञान, भौतिकी, विज्ञान।

वास्तव में यदि देखा जाये तो प्रकृतिवादी पाठ्यक्रम का संगठन अपने ही ढंग से करते हैं और मानते हैं कि बालक की प्रकृति, नैसर्गिक रुचि, योग्यता, अनुभव व स्वाभाविक क्रियाओं के आधार पर ही पाठ्यक्रम का संगठन होना चाहिए और पाठ्यक्रम में वह विषय रखे जाने चाहिए जो बालक के विकास की विभिन्न अवस्थाओं के अनुरूप हों। पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्तों के सम्बन्ध में प्रकृतिवादी विचारधारा इस प्रकार है—

1. पाठ्यक्रम निर्माण का आधार बालक हो।
2. पाठ्यक्रम में विज्ञान विषयों को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाये।
3. पाठ्यक्रम व्यावहारिक व जीवनोपयोगी हो।
4. पाठ्यक्रम अनुभव-केन्द्रित हो।

पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में **रूसो** ने अपने विचार अभिव्यक्त करते हुए कहा है—

अवस्था	पाठ्यक्रम
1. शैशवावस्था—	प्रकृति की गोद ही बालक का वास्तविक पाठ्यक्रम हो।
2. बाल्यावस्था—	कोई औपचारिक पाठ्यक्रम संगठित किया जाये 1. ज्ञानेन्द्रियों के विकास पर बल। 2. पुस्तकीय ज्ञान का विरोध। 3. पाठ्यक्रम में तैरना, खेलना, दौड़ना कूदना आदि सम्मिलित किया जाये।
3. किशोरावस्था—	1. पाठ्यक्रम द्वारा जिज्ञासा प्रवृत्ति को सन्तुष्ट किया जाये। 2. पाठ्यक्रम में प्राकृतिक विज्ञानों का अध्ययन निहित किया जाये। 3. पाठ्यक्रम में भाषा, गणित, साहित्य, संगीत व हस्तकलाओं को रखा जाये। 4. सामाजिक विषयों के अध्ययन द्वारा बालक में सामाजिक भावना का विकास किया जाये। 5. नैतिक शिक्षा द्वारा बालक को संवेग पर नियन्त्रण रखना सिखाना।

प्रकृतिवाद के पाठ्यक्रम की आलोचना का मुख्य कारण यह है कि इन्होंने विज्ञान केन्द्रित पाठ्यक्रम पर अधिक बल दिया है एवं सामाजिक व सांस्कृतिक पाठ्यक्रम की उपेक्षा की है।

प्रकृतिवाद व शिक्षण विधियाँ
(Naturalism and Methods of Teaching)

प्रकृतिवाद शिक्षण विधियों के परम्परागत प्रारूप की आलोचना करता है और इस विचार को मान्यता देता है कि शिक्षण विधियों में भी नित्य नवीन परिवर्तन होने चाहिए। **रूसो** (Rousseau) ने कहा है कि अपने शिक्षार्थी को कोई भी शाब्दिक पाठ न पढ़ाओ वरन् उसे अनुभव द्वारा सीखने के अवसर दो। (Give your scholar no verbal lesson, he should be taught by experience alone.) प्रकृतिवाद का केन्द्र-बिन्दु छात्र है। इस कारण वह यह मानते हैं कि जिन विधियों के द्वारा छात्रों को पढ़ाया जाये, वह निम्न तीन सिद्धान्तों पर आधारित हों—

1. विकास या उन्नति का सिद्धान्त (Principle of Growth),
2. छात्र क्रिया का सिद्धान्त (Principle of Pupil Activity),
3. वैयक्तिकता का सिद्धान्त (Principle of Individualization)।

स्पेन्सर (Spencer) महोदय ने प्रकृतिवादी शिक्षण विधियों के अन्तर्गत 6 सिद्धान्तों की चर्चा की है जो इस प्रकार हैं—

1. **प्रकृति के अनुरूप शिक्षा** (Education according to Nature)—शिक्षा बालक के लिए संचालित की जाने वाली एक प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य बालक का स्वाभाविक रूप से विकास करना है अतः शिक्षा के द्वारा बालक की नैसर्गिक वृद्धि होनी चाहिए और शिक्षण प्रक्रिया व बालक के अनुभवों के बीच सामंजस्य स्थापित किया जाना चाहिए।

2. **शिक्षा आनन्द प्रदायनी** (Education is for Enjoyment)—हम शिक्षण की जो भी विधि अपनायें, उसका उद्देश्य बालक में शिक्षण के प्रति रुचि जाग्रत करना होना चाहिए चूँकि जब तक बालक किसी चीज में रुचि नहीं लेगा, तब तक वह शारीरिक व मानसिक रूप से किसी भी बात को सीखने हेतु तत्पर नहीं होगा। इसी कारण प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक **थार्नडाइक** (Thorndike) ने कहा था कि शिक्षण विधि में अभिप्रेरणा सिद्धान्त (Law of Motivation), प्रभाव का नियम (Law of Effect) तथा तत्परता का नियम (Law of Rediness) को समाहित किया जाना चाहिए।

3. **स्वचालित आत्म-क्रिया** (Spontaneous Self-Activity)—**स्पेन्सर** का विचार था कि बालक किन्हीं अन्य के प्रयासों द्वारा नहीं सीखता अपितु वह स्वयं अपनी आत्म-क्रिया सीखता है और स्वयं के प्रयासों द्वारा अर्जित ज्ञान ही वास्तविक व चिरस्थाई होता है।

4. **शिक्षा में शारीरिक व मानसिक विकास का सन्तुलन** (Balance in Physical and Mental Development in Education)—शिक्षण विधियाँ इस विचार को ध्यान में रखते हुए अपनाई जानी चाहिए कि शिक्षा को बालक के व्यक्तित्व के दो प्रमुख पक्षों (मानसिक व शारीरिक) का समान रूप से विकास करना है। किसी की भी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए।

Scanned with CamScanner

5. **नकारात्मक शिक्षा (Negative Education)**—नकारात्मक शिक्षा से अभिप्राय है कि शिक्षा हमें सत्यता व पुण्य का पाठ नहीं पढ़ाये वरन् हमें असत्यता व पाप से दूर रहना सिखाये अर्थात् नकारात्मक शिक्षा गुण आरोपित नहीं करती वरन् अवगुणों से बचाती है। यह वह मार्ग प्रशस्त करती है जो व्यक्ति को अवगुणों से परे रखता है।

6. **शिक्षण विधि आगमनात्मक हो (Teaching Method should be Inductive)**—इस सन्दर्भ में प्रकृतिवाद ने जिस विधि को जन्म दिया, उसे ह्यूरिस्टिक विधि (Heuristic Method) के नाम से जाना जाता है। बालक को प्रत्यक्ष रूप से सीखने के अवसर मिलने चाहिए जिसमें छात्र को एक अन्वेषक या आविष्कारक की भूमिका अदा करनी होती है। इसी को हम आगमन विधि कहते हैं।

इसके अलावा प्रकृतिवाद ने जिन विधियों के प्रयोग पर महत्त्व दिया है वह इस प्रकार है—

1. **करके सीखना (Learning by Doing)**—प्रकृतिवाद यह मानता है कि शिक्षा को सैद्धान्तिक न होकर व्यावहारिक होना चाहिए और बालक जो ज्ञान व्यावहारिक रूप में अर्जित करेगा, वह स्थाई होता है।

2. **स्वानुभव द्वारा सीखना (Learning by Experience)**—चॉक एण्ड टॉक (Chalk and Taught) विधि की अवहेलना प्रकृतिवादियों ने की। उनके अनुसार शिक्षण प्रक्रिया में बालक की सक्रिय सहभागिता होनी चाहिए और इस विचार के आधार पर विभिन्न शिक्षण विधियों का आविष्कार हुआ, यथा—डाल्टन विधि, प्रोजेक्ट विधि, मॉन्टेसरी विधि, प्रत्यक्ष प्रणाली, निरीक्षण प्रणाली व प्रयोगशाला विधि।

3. **खेल द्वारा सीखना (Learning through Play)**—खेल द्वारा सीखना प्रकृतिवाद की एक उचित विधि है। फ्रॉबेल, रॉस आदि शिक्षाशास्त्रियों ने भी इसे महत्वपूर्ण विधि माना है। उनका विचार है कि खेल द्वारा बालक विभिन्न क्षमताओं को प्राप्त करता है और साथ ही खेल की ओर बालक का स्वाभाविक रुझान भी होता है। खेल बालक को जीवन की वास्तविक परिस्थितियों से अवगत कराते हुए उसमें आनन्द वृद्धि व सृजनात्मकता की अभिवृद्धि करते हैं। प्रकृतिवाद बालक की स्वतन्त्रता को महत्व देता है। अतः वह खेल विधि को भी व्यक्तिगत रूप से अपनाने की बात करता है।

प्रकृतिवाद व अनुशासन
(Naturalism and Discipline)

प्रकृतिवाद अनुशासन के सम्बन्ध में निम्न विचार प्रस्तुत करता है—

1. अनुशासन का मुक्त्यात्मक स्वरूप (Free Discipline) होना चाहिए और बालक के ऊपर अनावश्यक दबाव अनुशासन हेतु नहीं डाले जाने चाहिए।

2. अनुशासन हेतु बालक को यह अनुभूति करवानी चाहिए कि अपने व्यवहार का नियन्ता व नियामक बालक स्वयं है, न कि समाज या विद्यालय। अतः अनुशासन आन्तरिक व स्व-प्रेरण पर आधारित होना चाहिए।

3. प्रसिद्ध प्रकृतिवादी दार्शनिक स्पेन्सर (Spencer) ने शिक्षा में अनुशासन की समस्या का समाधान आनन्द व दुःख के सिद्धान्त (Hedonistic Theory) के आधार पर किया। उनके अनुसार अनुशासन स्थापना का सबसे उपयुक्त साधन प्राकृतिक दण्ड व्यवस्था (Punishment by Natural Consequences) है।

4. स्पेन्सर से मिलता हुआ विचार रूसो (Rousseau) ने भी प्रस्तुत किया। उनके अनुसार प्राकृतिक साधनों द्वारा अनुशासन लाने का प्रयास होना चाहिए और उन्होंने स्वाभाविक परिणामों द्वारा अनुशासन (Discipline by Natural Consequences) का प्रतिपादन किया।

प्रकृतिवाद व शिक्षक
(Naturalism and Teacher)

1. प्रकृतिवाद अपनी व्यवस्था के अन्तर्गत शिक्षक को कोई स्थान नहीं देता। रूसो तो यह मानता है कि अध्यापक का स्थान "पर्दे के पीछे" (Behind the Curtain) होता है। वह तो मंच की व्यवस्था करने वाला है अर्थात् अध्यापक बालक के उचित विकास हेतु वातावरण की रचना करता है और उस वातावरण में विकसित होने हेतु बालक को स्वतन्त्र छोड़ देता है और आवश्यकतानुसार बालक का सहयोग करता है।

2. कुछ विचारक अध्यापक को एक निरीक्षणकर्त्ता (Observer) मानते हैं जिसका कार्य बालक के स्वाभाविक विकास का निरीक्षण करना है और उसके विकास हेतु उचित सुविधायें उपलब्ध कराना है।

3. प्रकृतिवाद यह भी मानता है कि अध्यापक का उत्तरदायित्व सिर्फ बालक की प्रकृति को समझना है (Know your Pupil)। इस सम्बन्ध में टैगोर ने कहा कि अध्यापक का यह उत्तरदायित्व है कि वह बालक को स्वयं में आत्मसात् करे (A teacher ought to have and realize child in himself.)

प्रकृतिवाद व विद्यालय
(Naturalism and School)

प्रकृतिवाद विद्यालय के औपचारिक स्वरूप एवं समय-विभाग चक्र का विरोधी है। उसके अनुसार प्रकृति ही विद्यालय है। यदि हम विद्यालय के स्वरूप को निश्चित कर दें तो बालक को स्वतन्त्र विकास के अवसर नहीं मिल पायेंगे और वह हमेशा अध्यापकों के दबाव में रहेगा। इस कारण शिक्षण हेतु बालक को प्रकृति की गोद में छोड़ देना चाहिए। यही बालक का वास्तविक विद्यालय है।

प्रकृतिवाद का मूल्यांकन
(An Estimate of Naturalism)

प्रकृतिवादी विचारधारा का मूल मन्त्र बाल-केन्द्रित शिक्षा है। सबसे पहले प्रकृतिवाद ने इस वाक्य में परिवर्तन किया—

"शिक्षक लेटिन पढाता है"
"शिक्षक जॉन को लेटिन पढ़ाता है"
"शिक्षक, जॉन को लेटिन पढ़ाता है"

यह वाक्य परिवर्तन इस ओर संकेत दे रहा है कि शिक्षण प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण इकाई न तो अध्यापक है, न पाठ्य-वस्तु वरन् विद्यार्थी सर्वोपरि है। प्रकृतिवादी विचारधारा के सम्बन्ध में न तो हम यह कह सकते हैं कि यह गुणों से भरपूर है और न ही यह कि यह अवगुणों से युक्त है। इसके प्रमुख गुण व अवगुण इस प्रकार है—

Scanned with CamScanner

अरस्तु के अनुसार → शिक्षा का मूल्य उद्देश्य Idealism का व्यक्ति को नैतिक एवं बौद्धिक सद्गुणों का आधार बनाना है, व्यक्ति को ऐसे श्रेष्ठतम मूल्यों से अलंकृत करना है जो मानवीयता के लिए आवश्यक

महात्मा ही आदर्शवाद का प्रतिरूप है

11

आदर्शवाद

[IDEALISM]

आदर्शवाद दार्शनिक विचारधारा प्राचीनतम विचारधारा है। मानव संस्कृति का जब से विकास हुआ, उसकी इस बात में आस्था रही कि इस प्रकृति में वास्तविक तत्त्व आध्यात्मिक है और जब हम प्रकृति की सत्ता को तिरस्कृत करते हुए मनस् या आत्मा की सत्ता को स्वीकार करने लगते हैं, उसे ही हम आदर्शवादी दर्शन की संज्ञा देने लगते हैं। आदर्शवादी विचारधारा जड़-प्रकृति को मनस् की अभिव्यक्ति मात्र मानता है। आदर्शवाद जिसे हम अंग्रेजी में 'आइडियल इज्म' (Idealism) कहते हैं, दो शब्दों से मिलकर बना है–

Idea+ism

कुछ विचारक यह मानते हैं कि इसमें निम्न दो शब्द हैं–

Ideal+ism

इसमें (L) सुविधा के लिए जोड़ दिया गया है। वास्तव में यदि देखा जाये तो इसे Idea या विचार से ही उत्पन्न माना जाना चाहिए चूँकि इसके प्रवर्तक दार्शनिक विचार की चिरन्तन सत्ता में विश्वास रखते हैं। इसी कारण इसे विचारवाद या प्रव्ययवाद की संज्ञा भी दी जाती है। परन्तु प्रचलन में हम आदर्शवाद का प्रयोग ही करते हैं। यह दर्शन वस्तु की अपेक्षा विचारों, भावों तथा आदर्शों को महत्त्व देते हुए यह स्वीकार करता है कि जीवन का लक्ष्य आध्यात्मिक मूल्यों की प्राप्ति तथा आत्मा का विकास है। इसी कारण यह आध्यात्मिक जगत को उत्कृष्ट मानता है और उसे ही सत्य व यथार्थ रूप में स्वीकार करता है।

आदर्शवाद की परिभाषायें

(Definitions of Idealism)

1. ब्रूबेकर (Brubacher) –आदर्शवादियों के अनुसार, "इस जगत को समझने के लिए मन केन्द्रीय बिन्दु है। इस जगत को समझने हेतु मन की क्रियाशीलता से बढ़कर उनके लिए अन्य कोई वास्तविकता नहीं है।"

(The idealists point out that it is mind that is central in understanding the world. To them nothing gives a greater sense of reality than the activity of mind lugaged in trying to comprehenced its world.)

2. रॉस (Ross)–"आदर्शवाद के अनेक रूप हैं किन्तु सबका सार यह है कि मन या आत्मा ही इस जगत का पदार्थ है और मानसिक स्वरूप सत्य है।"

(Idealistic philosophy takes many and varied forms, but the postulate underlying all is that mind or spirit is essential world stuff that the true reality is of a mental character.)

Scanned with CamScanner

3. हेण्डरसन (Henderson)—"आदर्शवाद मनुष्य के आध्यात्मिक पक्ष पर बल देता है क्योंकि आदर्शवादियों के लिए आध्यात्मिक मूल्य जीवन के तथा मनुष्य के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पहलू हैं। एक तत्त्वज्ञानी आदर्शवादी का विश्वास है कि मनुष्य का सीमित मन असीमित मन से पैदा होता है। व्यक्ति और जगत दोनों बुद्धि की अभिव्यक्ति है और भौतिक जगत की व्याख्या मन से ही की जा सकती है।"

(Idealism emphasises the spiritual side of man because to the idealist spiritual values are the most important aspects of man and of life. A meta-physical idealist would believe that man's finite mind springs from the infinite mind that both the individual and the world are expressions of intelligence that the material world is to be expressed or explained by the mental.)

आदर्शवाद की आधारभूत मान्यतायें
(Basic Assumptions of Idealism)

1. भौतिक जगत की अपेक्षा आध्यात्मिक जगत का महत्त्वपूर्ण स्थान (Importance to Spiritual World in Comparision to Physical World)—आदर्शवाद के अनुसार भौतिक वस्तुएँ व भौतिक जगत नाशवान होने के कारण अस्थाई है और आध्यात्मिक जगत सत्य, स्थाई व वास्तविक है। इसका मूलभूत कारण यह है कि आध्यात्मिक जगत वैचारिक रूप में विद्यमान रहता है और विचार चिरस्थाई होते हैं और मानव का प्रमुख कार्य इस आध्यात्मिक जगत को समझते हुए उससे सम्बन्ध स्थापित करना है।

2. ब्रह्माण्ड मानव मस्तिष्क में निहित (Existence of Universe in Mind)—आदर्शवाद यह मानता है कि इस जगत की आधारभूत बातें मानव आत्मा व मस्तिष्क में निहित होती हैं। इस कारण यह भौतिक पदार्थों को महत्त्व नहीं देता। वह मानते हैं कि मस्तिष्क में विचार पहले आता है और वस्तु की कल्पना बाद में जन्म लेती है। विचार शाश्वत और अपरिवर्तनशील होते हैं, उदाहरणार्थ–'कार' आज है, कल नष्ट हो सकती है परन्तु 'कार' का विचार नष्ट नहीं हो सकता है।

3. इस जगत में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ है (Man Centre of Universe)—आदर्शवादी जड व प्रकृति की तुलना में मनुष्य को महत्त्वपूर्ण स्थान देते हैं और इनके दर्शन का मुख्य आधार मानववाद है। वह मानते हैं कि मनुष्य में बुद्धि, तर्क व आध्यात्मिक गुण होते हैं और यह गुण उसे पाशविक प्रवृत्तियों से ऊँचा उठाते हुए उसमें अहं आत्मानुभूति की क्षमता उत्पन्न करते हैं। आत्मानुभूति के माध्यम से व्यक्ति शनैः-शनैः ईश्वर का साक्षात्कार करने लगता है और वह नैतिक व आध्यात्मिक गुणों से युक्त हो जाता है।

4. मनुष्य व प्रकृति में संश्लेषण (Synthesis between Man and Nature)—आदर्शवादी मानव जीवन की व्याख्या हेतु शास्त्र (Teleological Basis) के आधार पर करते हैं। इसका अभिप्राय है कि मानव जीवन तथा प्राकृतिक प्रक्रिया के कुछ समान उद्देश्य होते हैं जिससे वह एक साथ चलती है। इसी कारण मानव व प्रकृति में सदैव समन्वय रहता है और दोनों ही किसी लक्ष्य की प्राप्ति हेतु एक साथ कार्य करते हैं।

5. ब्रह्माण्ड की रचना आध्यात्मिक शक्ति द्वारा (Spiritualistic Explanation of Universe)—आदर्शवाद यह नहीं मानता कि यह ब्रह्माण्ड यन्त्रवत् रूप में अपने कार्य करता है और न ही यह मानता है कि इस जगत की व्याख्या यान्त्रिक तत्त्वों के आधार पर की जा सकती है चूँकि यह ब्रह्माण्ड ईश्वरीय शक्ति द्वारा निर्मित है। यह शक्ति इन्द्रियगोचर नहीं है, न ही इसका आदि और अन्त है।

6. ब्रह्माण्ड में आध्यात्मिक मूल्यों का महत्त्व (Stress on Spiritual Values in the Universe)—आदर्शवाद सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् (Truth, Beauty and Goodness) में विश्वास रखता है और यह स्वीकार करता है कि मानव जीवन का उद्देश्य इन मूल्यों को जानना होना चाहिए। इनका ज्ञान होने पर व्यक्ति ईश्वर से तादात्म्य स्थापित करने लगता है और वह यह भी मानते हैं कि इन मूल्यों को प्राप्त करने के बाद मनुष्य को अपने व्यावहारिक जीवन में भी इनका प्रयोग करना चाहिए।

7. आत्मा व परमात्मा के अस्तित्व को मानना (To Believe in the Existence of Soul and God)—आदर्शवादी यह मानकर चलते हैं कि आत्मा व परमात्मा इतने सूक्ष्म हैं कि इनको देखा नहीं जा सकता परन्तु इनका अनुभव अवश्य किया जा सकता है। परन्तु ईश्वर के अस्तित्व को समझने हेतु इन्द्रियों की आवश्यकता नहीं होती वरन् उसकी अनुभूति मन व बुद्धि द्वारा होती है।

8. विभिन्नता में एकता (Unity in Diversity)—संसार में विभिन्न वस्तुओं को यदि हम देखें तो वह ईश्वरीय शक्ति के माध्यम से एकता के सूत्र में बँधी हुई हैं और ईश्वरीय शक्ति ही इन वस्तुओं का संचालन करती है। आदर्शवाद यह मानता है कि मानव जीवन तभी सफल व पूर्ण होता है जब वह जगत में विद्यमान एकता के मध्य ईश्वर का आभास कर सके।

9. प्रत्यात्मक ज्ञान में आस्था (Belief in Conceptual Knowledge)—आदर्शवाद वैचारिक व प्रत्यात्मक ज्ञान में आस्था रखता है और यह मानता है कि इस जगत को हम तर्क के आधार पर ही समझ सकते हैं।

10. व्यक्तित्व के विकास पर बल (Emphasis upon Personality Development)—आदर्शवाद व्यक्ति को एक आदर्श मानव या पूर्ण मानव के रूप में विकसित करने की बात करता है। व्यक्ति में उन गुणों को प्रतिरोपित किया जाना चाहिए जो उसे एक अच्छा व्यक्ति बनने में सहयोग दे सकें।

आदर्शवाद के प्रारूप (Forms of Idealism)

दार्शनिकों ने आदर्शवाद के विभिन्न प्रकार बताये हैं जिनमें से प्रमुख अधोलिखित हैं—

1. आत्मनिष्ठ आदर्शवाद (Subjective Idealism)	हीगल का आदर्शवाद (Hegel's Idealism)	3. वस्तुनिष्ठ आदर्शवाद (Objective Idealism)
↓		
बर्कले का आदर्शवाद (Berkeley's Idealism)	आदर्शवाद के प्रारूप (Forms of Idealism)	प्लेटो का आदर्शवाद (Plato's Idealism)
		↑
2. प्रपंचवाद आदर्शवाद (Phenomenial Idealism)	→ काण्ट का आदर्शवाद (Kant's Idealism)	4. नैतिक आदर्शवाद (Moral Idealism)

Scanned with CamScanner

1. **व्यक्तिनिष्ठ या आत्मनिष्ठ आदर्शवाद** (Subjective Idealism)—इसके प्रवर्तक ब्रिटिश दार्शनिक **बर्कले** (Berkeley) को माना जाता है। इसके अनुसार ज्ञान के पदार्थ मन पर निर्भर होते हैं। इस कारण उनका कोई पृथक् अस्तित्व नहीं है और यह विचारधारा यह भी मानती है कि यह विश्व भी मन तथा उसमें निहित विचारों पर निर्भर है। किसी भी वस्तु का अस्तित्व उस वस्तु के प्रत्यक्षीकरण पर निर्भर करता है और मन जब तक किसी वस्तु का प्रत्यक्षीकरण नहीं कर लेता, हम उसके अस्तित्व से अनभिज्ञ रहते हैं। **बर्कले** का विचार है कि जो वस्तु भौतिक है, वह आध्यात्मिक वस्तु को कैसे प्रभावित कर सकती है और विचार के समान, विचार के अलावा और क्या चीज हो सकती है ? यदि मेरा मनस् मेरे परिवेश के जगत से विचार ग्रहण करता है तो वह जगत विचारों का जगत होना चाहिए। वह भौतिक जगत नहीं हो सकता। इसके आत्मनिष्ठ आदर्शवाद की मुख्य विशेषतायें निम्न हैं—

1. प्रत्येक अस्तित्व ज्ञान के क्षेत्र में निहित है (Every Existent Subject of Knowledge)।
2. प्रत्यक्षीकरण द्वारा ही कोई गुण अस्तित्व बनाये रखते हैं (Qualities come into Existence only on Perception)।
3. पदार्थ व ज्ञान एक दूसरे पर निर्भर हैं (Objects and Knowledge Conform to Each other)।
4. प्रतीतायें व्यक्तियों पर निर्भर करती हैं (Images depend upon Persons)।
5. पदार्थ का ज्ञान प्रत्यक्ष होता है (Knowledge of the Object Direct)।
6. ईश्वरवाद पर बल (Stress on Theism)।
7. भौतिकवाद का बहिष्कार (Rejection of Materialism)।
8. पदार्थ एक समान नहीं होते (Objects not Common)।

2. **प्रपंचवाद आदर्शवाद** (Phenomenial Idealism)—इसके जन्मदाता काण्ट माने जाते हैं। काण्ट पदार्थ को सत्य नहीं मानता और यह मानता है कि ज्ञान के पदार्थ मन पर निर्भर करते हैं। इस कारण उनका पृथक् से कोई अस्तित्व नहीं होता। ज्ञान-प्राप्ति की प्रक्रिया में केवल संवेदन की स्थिति में प्रवाह बाह्य-जगत से मनस् के प्रति नहीं होता है परन्तु उसके पश्चात् प्रत्यक्ष ज्ञान, प्रत्यय ज्ञान तथा अवधारणा आदि सभी स्थितियों में ज्ञान प्रक्रिया मनस् के पदार्थ की ओर प्रवाहित होती है। काण्ट के अनुसार ज्ञान प्रक्रिया के दो प्रमुख तत्त्व हैं—प्रथम वह ज्ञान जो अनुभव से पूर्व विद्यमान रहता है (Priori Knowledge) और द्वितीय वह ज्ञान जो अनुभव पर आधारित होता है (Posteriori Knowledge)। साथ ही वह यह भी मानते हैं कि ज्ञान की प्रक्रिया में तीन संकायों का महत्त्वपूर्ण स्थान होता है जो इस प्रकार हैं—

1. संवेदन (Faculty of Sensation)
2. समझ (Faculty of Understanding)।
3. तर्क (Faculty of Reason)

वह यह भी मानता है कि व्यक्तिनिष्ठ व वस्तुनिष्ठ ज्ञान में समन्वय आवश्यक है और यह समन्वय ईश्वर द्वारा ही सम्भव है। काण्ट के प्रपंचयात्मक आदर्शवाद की मुख्य विशेषताएँ अधोलिखित हैं—

1. प्रपंच ज्ञान पर निर्भर करते हैं (Phenomena depend upon Knowledge)।
2. प्रपंचयात्मक वस्तुओं के गुण भी ज्ञान पर निर्भर करते हैं (Qualities of Phenomenal Objects also depend upon Knowledge)।
3. पदार्थ या वस्तुएँ प्रपंचयात्मक रूप में प्रकट होते हैं (Object Appears in Phenomenal Form)।
4. प्रपंचों का प्रत्यक्ष ज्ञान (Direct Knowledge of Phenomena)।
5. प्रपंचों के ज्ञान में मानसिक प्रक्रियाओं का आधार (Mental Construction Base of Knowledge of Phenomenon)।

3. **वस्तुनिष्ठ आदर्शवाद** (Objective Idealism)—इसकी चर्चा **हीगल** नाम के दार्शनिक ने की। इनके अनुसार पदार्थ मन से अलग नहीं होते हैं। पदार्थ वास्तविक होते हैं, पर वह पूर्ण रूप से मन पर निर्भर नहीं होते। वह यह मानता है कि विचार ही सब कुछ है व सब कुछ ही विचार है (Idea is everything and everything is idea.) वह यह भी मानता है कि सभी विचार वस्तुनिष्ठ होते हैं और वास्तविक सत्य परम तत्त्व व शुद्ध चेतन में निहित है। उसने द्वन्द्ववाद (Dualism) का अन्त करते हुए कहा कि आत्म व वस्तु दोनों ही अन्तिम विचार के अंग हैं और यह परम विचार अमूर्त न होकर मूर्त व वास्तविक होता है।

हीगल यह भी मानता है कि यह सम्पूर्ण विश्व परिवर्तनशील व विकासोन्मुख है (Changing and Evolving) और इस ब्रह्माण्ड की तीन विशेषताएँ हैं—

जीवित प्राणी	प्रकृति	आत्म
(The Living Being)	(Nature)	(Self)

इसी विकास क्रम की चर्चा करते हुए **हीगल** का विचार है कि 'सत्ता' परमतत्त्व के मन में विचार का विकास है। सारे क्रम विकास का इतिहास एक कथन के समान है जो क्रमशः पूर्ण ज्ञान की ओर उन्मुख होता है। विकास के मूल में वह विरोधात्मकता का सिद्धान्त मानते हैं और यह विरोधाभास तब तक चलता रहता है जब तक कि सभी विरोधात्मकताओं का समाहार किसी सत्य में नहीं हो जाता। इसके लिए तीन स्थितियों को स्थापित करते हैं—

(1) स्थापना (Thesis),
(2) प्रतिस्थापना (Antithesis),
(3) संस्थापना (Synthesis)।

यह इस बात पर भी महत्व देता है कि व्यक्ति का विकास नैतिक व सामाजिक स्थिति पर ही निर्भर करता है। उनके अनुसार समूह की नैतिकता जो कि सामाजिक संस्थाओं में परलक्षित होती है, वैयक्तिक नैतिकता का सही मार्गदर्शन कर सकती है।

Scanned with CamScanner

4. नैतिक आदर्शवाद (Moral Idealism)—प्लेटो ने इस विचार का प्रतिपादन किया। उनके अनुसार इस संसार में वस्तुओं की अपेक्षा विचार अधिक महत्त्वपूर्ण, नैतिक, विनाशहीन, पूर्ण एवं शाश्वत है और विचार ही सत्य का रूप है। वस्तुएँ नाशवान व परिवर्तनशील हैं।

प्लेटो ने सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् को जीवन के शाश्वत मूल्यों या आदर्शों के रूप में व्यक्त किया है और यह माना है कि इनकी प्राप्ति ही ईश्वर की प्राप्ति है। सत्य, शिवं व सुन्दरं की प्राप्ति ही मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य होना चाहिए। इनको हम क्रमश: इस प्रकार दे सकते हैं—

(1) सत्य—दर्शनशास्त्र (Philosophy),
(2) शिवं—नीतिशास्त्र (Ethics),
(3) सुन्दरम्—कलाओं (Arts)।

प्लेटो ने आत्मा को अमर, शाश्वत एवं विनाशहीन बताया है और माना है कि जो आत्मा विचारों का ज्ञान प्राप्त कर लेती है, वह मृत्यु के पश्चात् विचारों के जगत में पहुँच जाती है और जो आत्मा पाप करती है, वह पुनर्जन्म द्वारा पुन: इस संसार में जन्म लेती है।

आदर्शवाद एवं शिक्षा
(Idealism and Education)

आदर्शवाद मनुष्य को ईश्वर की सर्वोत्कृष्ट कृति के रूप में स्वीकार करता है और साथ ही यह मानता है कि आध्यात्मिक वातावरण से ज्यादा महत्त्वपूर्ण सांस्कृतिक वातावरण होता है क्योंकि वह मनुष्य की स्वयं की रचना है। आदर्शवाद मानता है कि मानव इस पृथ्वी पर आध्यात्मिक ज्योति लेकर उत्पन्न होता है व शिक्षा मनुष्य को इस योग्य बनाती है कि वह अपने भीतर इस आध्यात्मिकता का दर्शन कर सके और आत्मबोधन कर सके। रस्क के कथनानुसार, "शिक्षा के द्वारा आध्यात्मिकता का क्षेत्र विशाल बन जाता है और उसके द्वारा जाति के विचारों एवं संस्कृति की सुरक्षा की जाती है और उसे नई परिस्थितियों के ढाँचे में ढालकर गतिशील बनाया जाता है।" (Education must enable manking through its culture to enter more and fully into the spiritual realm, they believe that man's nature is spiritual and divine and education should adjust the man accordingly.—**Rusk**)

मानव व पशु में अन्तर भी हम इसी आधार पर करते हैं कि पशु अपने वातावरण को ज्यों का त्यों स्वीकार करता है परन्तु मनुष्य आदि काल से वातावरण को अपने अनुरूप ढालता है। आदर्शवादी यह मानते हैं कि मनुष्य अपने प्राकृतिक वातावरण से अनुकूलन तो शिक्षा के बिना भी कर सकता है परन्तु सांस्कृतिक वातावरण से अनुकूलन हेतु शिक्षा की आवश्यकता होती है और इस प्रकार हम समाजीकरण या संस्कृतिकरण (Socialization or Culturalization) की प्रक्रिया मानते हैं।

शिक्षा का अर्थ (Meaning of Education)

आदर्शवादी विचारकों ने शिक्षा का अभिप्राय बताया है मनुष्य का पूर्ण मानव के रूप में विकास करना या दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि शिक्षा का अभिप्राय

है बालक को गुणों से परिपूर्ण करना, साथ ही शिक्षा वह है जो सिर्फ बालक के विकास तक ही सीमित नहीं रहती वरन् बालक को विकसित करके समाज का विकास करना चाहती है और आवश्यकता पड़ने पर समाज सुधारने का भी प्रयास करती है।

आदर्शवाद व शिक्षा के उद्देश्य
(Idealism and Aims of Education)

1. आत्मानुभूति का विकास (Development of Self-realization)—आदर्शवादी विचारधारा यह मानती है कि प्रकृति से परे यदि कोई चेतन सत्ता के अनुरूप है तो वह है 'मनुष्य'। इस कारण विश्व व्याप्त चेतन सत्ता की अनुभूति मनुष्य तब तक नहीं कर सकता जब तक उसके अन्दर व्याप्त चैतन्यता का विकास न हो। इस कारण शिक्षा का सर्वोच्च कार्य यह है कि वह मनुष्य को इतना सक्षम बनाये कि वह अपने वास्तविक स्वरूप को पहचाने व उसकी अनुभूति कर सके। इस आत्मानुभूति के प्रमुख रूप से चार सोपान होते हैं—

4. आध्यात्मिक 'स्व' (Spiritual Self)
3. बौद्धिक 'स्व' (Intellectual Self)
2. सामाजिक 'स्व' (Social Self)
1. शारीरिक व जैविकीय 'स्व' (Physical Self)

शारीरिक 'स्व' आत्मानुभूति का निम्नतम सोपान है जिसे प्रकृतिवादी आत्माभिव्यक्ति (Self-expression) की संज्ञा देते हैं। सामाजिक 'स्व' को अर्थ क्रियावादी महत्त्व देता है इसमें व्यक्ति सामाजिक हित की परिकल्पना करता है व सामाजिक कल्याण हेतु व्यक्तिगत स्वार्थों का परित्याग कर देता है। बौद्धिक अनुभूति के स्तर पर व्यक्ति विवेक द्वारा 'स्व' की अनुभूति करता है व सामाजिक नैतिकता से ऊपर उठकर सद्-असद् में भेद कर सकता है और उसका आचरण चिन्तन तथा विश्वास विवेकपूर्ण हो जाता है। आध्यात्मिक 'स्व' स्वानुभूति का सर्वोच्च स्तर है जहाँ व्यक्ति गुणों को अपने व्यक्तित्व में अंगीकृत सहज प्रक्रिया द्वारा ही कर लेता है व अपने अन्दर विश्वात्मा का तादात्म्य करने लगता है। इस विश्वात्मा को हम तीन रूपों से अभिव्यक्त करते हैं—सत्य, शिव व सुन्दर। आदर्शवादी जब आत्मानुभूति के लिए शिक्षा देने की बात करते हैं तो उनका एक ही लक्ष्य होता है, "अपने आपको पहचानो" (To Know Thyself।

2. आध्यात्मिक मूल्यों का विकास (Development of Spiritual Values)—आदर्शवादी विचारधारा भौतिक जगत की अपेक्षाकृत आध्यात्मिक जगत को महत्त्वपूर्ण मानती है। अत: शिक्षा के उद्देश्यों में भी बालक के आध्यात्मिक विकास को महत्त्व देते हैं। यह मनुष्य को एक नैतिक प्राणी के रूप में अवलोकित करते हैं व शिक्षा का उद्देश्य चरित्र निर्माण को मानते हैं। वह सत्य शिवं सुन्दरं के मूल्यों का विकास करते हुए इस बात की भी चर्चा करते हैं कि शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य बालक में आध्यात्मिक दृष्टि से विकास करना है।

3. बालक के व्यक्तित्व का उन्नयन (To Exalt Child's Personality)—बोगोस्लोवस्की के अनुसार, "हमारा उद्देश्य छात्रों को इस योग्य बनाना है कि वे सम्पन्न तथा सारयुक्त

Scanned with CamScanner

जीवन बिता सकें, सर्वांगीण तथा रंगीन व्यक्तित्व का निर्माण कर सकें, सुखी ... उल्लास का उपभोग कर सकें यदि तकलीफ आये तो गरिमा एवं शान के साथ ... सामना कर सकें तथा इस उच्च जीवन को जीने में दूसरे लोगों की सहायता कर ...

व्यक्तित्व के उन्नयन की चर्चा करते हुए प्लेटो व रॉस भी यह मानते हैं कि ... के द्वारा मानव व्यक्तित्व को पूर्णता प्राप्त की जानी चाहिए और साथ ही उसके ... का उन्नयन होना चाहिए।

4. अनेकता में एकता के दर्शन (To Establish Unity in Diversity)–आदर्श... इस विचारधारा का समर्थन करते हुए इस बात पर बल देता है कि शिक्षा ... बालक को इस दृष्टि से समर्थ बनाना होना चाहिए कि वह संसार में विद्यमान भिन्न-भि... बातों को एकता के सूत्र में बाँध सके अर्थात् बालक के अन्दर यह समझ उत्पन्न ... चाहिए कि वह इस संसार के संचालन करने वाली एक परम सत्ता है जो ईश्वर ... नाम से जानी जाती है और यह ईश्वर की सत्ता जगत के सभी प्राणियों का ... करती है। इस ईश्वरीय सत्ता की अनुभूति कराना ही शिक्षा का लक्ष्य होना चाहि... इसकी अनुभूति होने पर ही व्यक्ति इस संसार के साथ तादात्म्य स्थापित कर ... है व व्यक्तित्व को पूर्णता प्रदान करता है।

5. सभ्यता एवं संस्कृति का विकास (Development of Culture a... Civilization)–आदर्शवाद यह मानता है कि व्यक्ति जिस समाज का सदस्य है, ... समाज की संस्कृति से उसका परिचय होना परमावश्यक है, साथ ही बालक यदि ... को जीवित रखना चाहता है तो उसे समाज की धरोहर के रूप में जो सभ्यता व संस्कृ... प्राप्त होती है, उसकी भी रक्षा करनी चाहिए। सभ्यता व संस्कृति तो वह आधार ... करती है जिसके द्वारा समाज का विकास सम्भव होता है। आदर्शवाद व्यक्ति की ... समाज को महत्व देता है। इसी कारण वह शिक्षा का उद्देश्य सभ्यता व संस्कृति ... विकास करना मानते हैं। रस्क का विचार है कि "सांस्कृतिक वातावरण ... स्वरचित वातावरण है अथवा यह मनुष्य की सृजनात्मक क्रिया का परिणाम है जिस... रक्षा व विकास करना शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए।" (Cultural environment is ... environment of man's own making, it is a product of man's creative activi... The aim of idealistic education is the preservation as well as enrichment ... culture. –Rusk)

6. वस्तु की अपेक्षा विचारों का महत्त्व (Ideas are Important th... Object)–आदर्शवाद यह मानता है कि इस संसार में पदार्थ नाशवान है व विचार ... विचार सत्य, वास्तविक व अपरिवर्तनशील है। विचार ही मनुष्य को ज्ञान प्रदान ... का माध्यम है। यह संसार मनुष्य के विचारों में ही निहित होता है। वह यह मानते ... कि यह जगत यन्त्रवत् नहीं है। चूँकि इस जगत में विद्यमान वस्तुओं का जन्म मानसिक ... प्रक्रियाओं के फलस्वरूप ही होता है। इनका विचार है कि यह विश्व विचार के ... है, यन्त्रवत् नहीं (Universe is like a thought than a machine.)

7. जड़ प्रकृति की अपेक्षा मनुष्य का महत्त्व (Man is Important th... Nature)–आदर्शवादी मनुष्य का स्थान ईश्वर से थोड़ा ही नीचा मानते हैं। (Man is ...

little lower than angels.) इनका विचार है कि मनुष्य इतना सक्षम होता है कि वह आध्यात्मिक जगत का अनुभव कर सके व ईश्वर से अपना तादात्म्य स्थापित कर सके या उसकी अनुभूति कर सके। इस कारण वह जड़ प्रकृति से बहुत महत्वपूर्ण है। वह यह भी मानते हैं कि मनुष्य बुद्धिपूर्ण व विवेक पूर्ण प्राणी है और बुद्धि ही मनुष्य के विभिन्न प्रकार के क्रिया-कलापों का आधार बनती है जिससे मानव अपने आपको पशुवत् गुणों से ऊँचा उठा लेता है।

8. समाज हित का उद्देश्य (Aim of the Welfare of the Society)–आदर्शवाद जब शिक्षा के उद्देश्यों की चर्चा करता है तो व्यक्तित्व के विकास पर बल देता है और व्यक्तित्व विकास में सामाजिक हित अन्तर्निहित होता है। जब आदर्शवाद आत्मानुभूति की चर्चा करता है, तो आत्मानुभूति में व्यष्टि या स्वार्थपरता निहित न होकर समष्टि या परार्थ भाव निहित होता है। प्रसिद्ध आदर्शवादी दार्शनिक हॉकिंग (Hocking) जब शिक्षा के उद्देश्यों की चर्चा करता है तो वह शिक्षा के दो उद्देश्य बताता है–

1. सम्प्रेषण (Communication),
2. विकास के लिए प्रावधान (Development in Society)।

सम्प्रेषण में वह यह मानता है कि शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है कि वह समाज की संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक स्थानान्तरित करे सिर्फ संस्कृति का सम्प्रेषण मात्र करना ही शिक्षा का उद्देश्य नहीं है चूँकि सम्प्रेषण कर देने से संस्कृति अवरुद्ध हो जायेगी। अतः शिक्षा द्वारा प्रत्येक पीढ़ी को इस बात के लिए तैयार किया जाना चाहिए कि वह उस संस्कृति में विकास कर सके। इसके लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा उचित सामाजिक वातावरण तैयार करे जो समाज के विकास में सहयोग दे। हॉर्न (Horne) इन दोनों पक्षों (व्यक्तिगत व सामाजिक) के मध्य संश्लेषण करते हुए कहता है, "शिक्षा द्वारा बालक की संस्कृति का ज्ञान व उसमें विकास करना आना चाहिए, साथ ही उसमें सामाजिक कुशलता व नागरिकता का विकास भी होना चाहिए।"

आदर्शवादी विचारधारा ने मुख्यतया शिक्षा के उद्देश्यों की चर्चा की है परन्तु इन्होंने शिक्षा के अन्य पक्षों पर भी थोड़ा प्रकाश डाला है, उनकी उपेक्षा नहीं की है। अब हम इस बात की चर्चा करेंगे कि आदर्शवाद ने पाठ्यक्रम, पाठन विधि, शिक्षक, अनुशासन आदि के सम्बन्ध में क्या विचार दिये हैं।

आदर्शवाद व पाठ्यक्रम
(Idealism and Curriculum)

विभिन्न आदर्शवादी-दार्शनिकों ने पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में विभिन्न विचार दिये हैं जिनकी चर्चा हम आगे करेंगे। आदर्शवादियों ने पाठ्यक्रम निर्माण के सम्बन्ध में जो मूलभूत विचार व्यक्त किये हैं, वह इस प्रकार हैं–

1. पाठ्यक्रम ज्ञान व बुद्धि के विकास पर बल दे (Importance for the Development of Knowledge and Wisdom.)।

2. पाठ्यक्रम मानव के विचारों व आदर्शों पर आधारित है (Curriculum should be based on human ideas & ideals.)।

(2) आवश्यक यन्त्रों एवं प्रक्रियाओं का चयन करना अथवा स्वरूप विकसित करना। (Selecting constructing the needed instruments and procedure)।

(3) परिवर्तन के सन्दर्भ में प्रदत्तों का विश्लेषण एवं अर्थापन करना तथा विकास हेतु परिकल्पना प्रतिपादन करना (Analysing and interpreting the data of develop the hypothesis regarding needed change)

(4) परिकल्पना को कार्यरूप में बदलना (Converting hypothesis into action)।

प्रथम अवस्था के अन्तर्गत उद्देश्यों, शिक्षण विधियों प्रविधियों से सम्बन्धित मूल्यांकन हेतु प्रदत्तों के स्वरूप को निर्धारित किया जाता है।

द्वितीय अवस्था में आवश्यक उपकरणों तथा प्रक्रिया का चयन किया जाता है। इनके मूल्यांकन के लिए मूल्यांकन प्रक्रिया-मौखिक, लिखित तथा प्रयोगात्मक का निर्धारण किया जाता है।

तृतीय अवस्था में उपरोक्त आँकड़ों के आधार पर निदान करके उनमें सुधार हेतु परिकल्पना का प्रतिपादन किया जाता है। परिकल्पना के स्वरूप से यह भी स्पष्ट होता है कि पाठ्यक्रम में किस प्रकार परिवर्तन करने की सम्भावना है। परिकल्पना की पुष्टि के बाद यह निश्चित हो जाता है कि क्या परिवर्तन अपेक्षित है। परिकल्पना की पुष्टि करना आवश्यक होता है। यह प्रतिमान की अन्तिम अवस्था होती है। अनुपयुक्त परिकल्पना की पुष्टि से सुधार हेतु दिशा मिल जाती है।

हिल्दा तबा के इस प्रतिमान में अवस्थाओं अथवा सोपानों का अनुसरण क्रमशः किया जाता है। यह प्रतिमान भी अधिक व्यावहारिक है। प्रमाणों के आधार पर सुधार एवं विकास किया जाता है। सरन के मॉडल का स्वरूप विशिष्ट है, क्रियाएँ सुनिश्चित हैं, इसलिए अधिक प्रचलित हैं।

(III) पाठ्यक्रम मूल्यांकन के प्रतिमान-मुखोपाध्याय
(Mukhaadhaya Model of Curriculum Evaluation)

इस प्रतिमान का विकास भारतीय परिस्थिति में मुखोपाध्याय ने किया। यह प्रतिमान हिल्दा तबा के प्रतिमान से अधिक मिलता-जुलता है। दोनों प्रतिमानों में मूल्यांकन का अर्थ बी०एस० ब्लूम की परिभाषा पर आधारित है जिसके अन्तर्गत व्यवहार-परिवर्तन सम्बन्धी आँकड़ों को एकत्रित करके उनका अर्थापन किया जाता है।

शिक्षण तथा अधिगम में सम्बन्ध स्थापित करना है और अधिगम की प्रक्रिया शिक्षण पर आधारित होती है दोनों प्रक्रियाएँ उद्देश्य-केन्द्रित होनी चाहिए। पाठ्यवस्तु के माध्यम से शिक्षण क्रियायें सम्पादित की जाती हैं। पाठ्यवस्तु के निर्धारण में भी उद्देश्य को महत्त्व दिया जाना चाहिए। इस प्रकार पाठ्यक्रम विकास की प्रक्रियाओं को दो अवस्थाओं में विभाजित किया। इनमें पाँच सोपानों का अनुसरण किया जाता है—

पाठ्यक्रम मूल्यांकन का प्रतिमान-मुखोपाध्याय
(Mukhupadhaya Model of Curriculum Evaluation)

प्रथम अवस्था	—पाठ्यक्रम विकास (Phase I)
प्रथम सोपान	—आरम्भिक उद्देश्य (Intial Objectives)।
द्वितीय सोपान	—विशिष्ट उद्देश्य, पाठ्यवस्तु की व्यवस्था अनुदेशन सामग्री तथा शिक्षण तथा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया या स्वरूप निश्चित होता है।
तृतीय सोपान	—संस्था के उपलब्ध साधनों का छात्रों द्वारा उपयोग।
द्वितीय अवस्था	—पाठ्यक्रम विकास (Phase II)

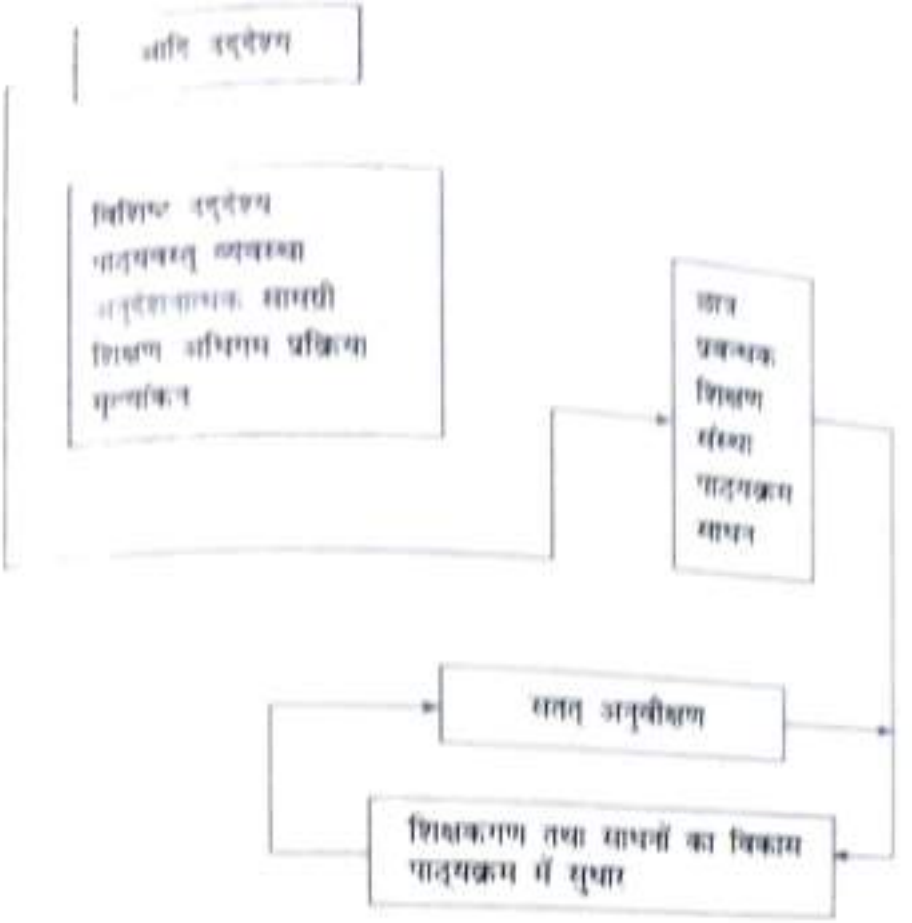

...र्थ सोपान– अध्यापकों तथा विकास के स्रोतों के आधार पर पाठ्यक्रम के प्रारूप में सुधार।

...म सोपान– निरन्तर शिक्षण अधिगम क्रियाओं का निरीक्षण तथा मूल्यांकन।

... सोपान की **प्रथम अवस्था** में उद्देश्यों, शिक्षण विधियों तथा संस्था के साधनों का छात्रों द्वारा कितना ... जा सकता है, यह ज्ञात किया जाता है। पाठ्यक्रम के लिए आधार तथा स्रोतों को ज्ञात किया जाता ...

...तीय **अवस्था** में इनके आधार पर पाठ्यक्रम के प्रारूप में सुधार किया जाता है। इन सुधारों का ... मूल्यांकन उद्देश्यों की प्राप्ति की दृष्टि से किया जाता है। इसके लिए मापदण्ड परीक्षण का प्रयोग ... है।

...म सोपान के अन्तर्गत छात्रों की आवश्यकता एवं विकासक्रम तथा पाठ्यवस्तु को ध्यान में रखकर ... निर्धारण किया जाता है। ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक तथा शारीरिक विकास के उद्देश्यों का ... किया जाता है। बी॰एस॰ ब्लूम॰ के वर्गीकरण को भी प्रयुक्त किया जाता है। शिक्षण स्तर भी उद्देश्यों ... में सहायक होता है।

...तीय सोपान में उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखते हैं जिससे उनका विशिष्टीकरण भी होता है। ... पाठ्यवस्तु की सहायता से शिक्षा क्रियाओं का सम्पादन करता है जिससे सीखने की अपेक्षित ... का ... करता है जिससे छात्रों के व्यवहार में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन लाया जाता है।

...तीय सोपान में ... स्रोतों का ज्ञान किया जाता है जिनका उपयोग छात्र अपने अध्ययन में कर सकता है। ... के विकास में इनका विशेष महत्त्व होता है। संस्था के स्रोत में अध्यापकों की योग्यता को भी ... किया जाता है। व्यावसायिक शिक्षा हेतु विद्यालयों में शिक्षक नहीं हैं, इसलिए व्यावसायिक पाठ्यक्रम ... रहे हैं।

... पाठ्यक्रम में सुधार तथा विकास किया जाता ... किया जाता है।

पंचम सोपान ... और पाठ्यक्रम ... जाता है। मूल्यांकन ...
इसके लिए निरीक्षण करते हैं ...
होता है।

पाठ्यक्रम प्रतिमान के आधार
(Basis of Curriculum Model)

पाठ्यक्रम प्रतिमान सम्बन्धी विभिन्न विचारों के अध्ययन से पाठ्यक्रम प्रतिमान निर्माण ... स्पष्ट हो जाते हैं। अब हम इन आधारों पर विचार करेंगे। प्रमुख आधार इस प्रकार हैं—

(1) **मानव जाति के अनुभव**—पाठ्यक्रम निर्धारण का पहला अधिनियम यह है कि ... क्रियाओं, विषयों और वस्तुओं को सम्मिलित करना चाहिए जो बालक को समस्त मानव जाति ... जानकारी कराएँ। इन अनुभवों को बालक कक्षा में, खेल के मैदानों में, प्रयोगशाला में अथवा ... पर प्राप्त कर सकता है। इस ज्ञान को प्राप्त करने के उपरान्त वह जीवन में भाग लेने के लिए ... हो जाता है।

(2) **जीवन से** सम्बन्धित—पाठ्यक्रम निर्धारण का दूसरा अधिनियम यह है कि ... पाठ्यवस्तु अथवा क्रियाएं सम्मिलित की जाएँ जो किसी न किसी रूप में बालक के वर्तमान ... और भावी जीवन के लिए उपयोगी हो। दूसरे शब्दों में जो विषय अथवा क्रियायें बालक के जीवन से सम्बन्धित नहीं हो, उन्हें पाठ्यक्रम में स्थान नहीं देना चाहिए।

(3) **रुचियाँ तथा** योग्यताएँ—यह पाठ्यक्रम निर्धारण का तीसरा अधिनियम है। इस ... पाठ्यक्रम की रचना बालक की रुचियों और योग्यताओं के अनुसार होनी चाहिए। जिस बालक की जैसी-रुचि, योग्यता अथवा आकांक्षा हो उस प्रकार की पाठ्यवस्तु चुनी जानी चाहिए जिससे ... में आनन्द आये और पीड़ा न हो। जिस वस्तु को सीखने में आनन्द आता है उसे बालक ... काफी समय तक याद रखता है।

(4) **रचनात्मक शक्तियों का विकास**—प्रत्येक बालक में किसी-न-किसी क्षेत्र में रचना ... की योग्यता होती है; अतः पाठ्यक्रम द्वारा बालकों को ऐसे अवसर मिलने चाहिये कि वे ... योग्यताओं को व्यक्त कर सकें। **रेमॉन्ट का कहना है कि** 'जो पाठ्यक्रम उपयुक्त हो उसमें ... रचनात्मक विषयों के प्रति सुझाव होने चाहिए; अतः पाठ्यक्रम में बालक की रचनात्मक शक्तियों ... पूरा प्रबन्ध होना चाहिए।

(5) व्यक्तिगत विभिन्नताएँ—पाठ्यक्रम निर्धारण का चौथा अधिनियम व्यक्तिगत ... ध्यान रखना है। पाठ्यक्रम व्यक्तिगत भेदों पर आधारित होना चाहिए। शिक्षा के मनोवैज्ञानिक ... सभी व्यक्तियों के लिए एक-सा पाठ्यक्रम उपयुक्त समझा जाता था। मनोविज्ञान ने यह ... प्रत्येक व्यक्ति एक-दूसरे से भिन्न है और उसका विशेष व्यक्तित्व है। पाठ्यक्रम द्वारा इस ... विकास होना चाहिए। यदि पाठ्यक्रम कठोर (Rigid) हुआ तो विशेष व्यक्तित्व का ... सकेगा। इसलिए पाठ्यक्रम लचीला (Flexible) होना चाहिए। पाठ्यक्रम के ... आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सकता है। शिक्षक को यह अधिकार होना चाहिए ... आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर ले, तभी वह उसको सफल बना सकेगा।

(6) **अग्रदर्शिता** (Basis of Forward Looking)—यद्यपि पाठ्यक्रम में उन्हीं विषयों का **समावेश होना** चाहिए जो बालक के जीवन से सम्बन्धित हो, परन्तु बालक के सफल ... **जीवन** में अनुकूलीकरण की दृष्टि से पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों, वस्तुओं और क्रियाओं का ... जिनके द्वारा बालक अपने जीवन में आने वाली समस्याओं एवं परिस्थितियों का सामना ...

...किया सके। **रायबर्न** (Ryburn) के कथनानुसार, "बालक जो कुछ विद्यालय में सीखता है उसमें ...योग्यता आनी चाहिए कि वह जीवन की परिस्थितियों से अनुकूलन करे और आवश्यकता पड़ने ...में परिवर्तन ला सके।"

... पर्याप्त समय की व्यवस्था (Base of Proper allocation of Time)—पाठ्यक्रम का एक ...यह भी है कि उसमें समय का ध्यान रखा जाये। एक विषय के कोर्स को पूरा करने के लिए जितने ...आवश्यकता हो उतना ही समय पाठ्यक्रम में उसके लिए निश्चित करना चाहिए। निश्चित समय से ...अधिक समय देने से हानियाँ हो सकती है। बालकों के विकास-क्रम को ध्यान में रखकर किसी विषय ...करने के लिए उचित समय निर्धारित करना चाहिए।

(...) सामाजिक पक्ष—पाठ्यक्रम निर्धारण का सातवाँ अधिनियम यह है कि पाठ्यक्रम में ऐसी क्रियाएँ ...सम्मिलित किये जाएँ जो बालक की सामाजिक भावनाओं को प्रोत्साहन दें। ऐसी भावनाओं के उदय ...बालक समाज में रहने योग्य बन सकेगा और अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकेगा। पाठ्यक्रम में ...उन ऐसी प्रथाओं और मान्यताओं एवं सामाजिक समस्याओं का स्थान देना चाहिये जो ...के जीवन से सम्बन्धित हों। विद्यालय में ऐसा कार्यक्रम रखना चाहिये जो जाति के विकास में ...हो। इस प्रकार के कार्यक्रम बालकों को समाज में भली प्रकार रहने के लिये शक्ति प्रदान करते हैं ...अनुभव को सार्थक बना देते हैं। चूँकि समाज में परिवर्तन होते रहते हैं। इसलिए पाठ्यक्रम समाज की ...के अनुसार बनाना चाहिए तभी वह बदते हुए समाज की आवश्यकताओं को पूरा कर सकेगा।

(...) सह-सम्बन्ध—पाठ्यक्रम निर्धारण में यह बात ध्यान देने योग्य है कि पाठ्यक्रम के विषयों में परस्पर ...होना चाहिए। विषय पृथक्-पृथक् न हों। एक विषय की शिक्षा के आधार पर दूसरे विषयों को ...दी जा सके। अतः आजकल सभी शिक्षा-शास्त्री विषयों के सह-सम्बन्ध पर बल देते हैं। इसी सिद्धान्त ...पर एकीकृत पाठ्यक्रम तैयार किया जाता है। सह-सम्बन्ध के कई लाभ हैं जिनसे आप भली-भाँति ...हैं।

(10) जनतन्त्रीय भावना के विकास—वर्तमान भार में प्रजातन्त्रीय राज्य में पाठ्यक्रम का एक विशेष ...है बालक में प्रजातन्त्र की भावना का विकास करना उसका एक आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण कार्य समझा ...अतः पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जो जनतन्त्र की भावना एवं आदर्शों का पोषक हो। स्कूल के समस्त ...कार्य और अध्ययन सामूहिक रूप से होने चाहिए। शिक्षक, विद्यार्थी एवं जाति के सभी लोगों को ...अपना उत्तरदायित्व निभाना चाहिए तभी जनतन्त्रीय भावना का विकास हो सकेगा।

(11) स्वस्थ आचरण की प्राप्ति (Basis of Good Behaviour)—**क्रो** तथा **क्रो** महोदय के अनुसार ...पाठ्यक्रम में उन विषयों, वस्तुओं और क्रियाओं को स्थान देना चाहिए जो बालकों को एक-दूसरे के प्रति उत्तम ...सद्‌व्यवहार करना सिखाएँ।

(12) **कौतूहल एवं सामान्यीकरण—ए०एन० व्हाइटहैड** के कथनानुसार, पाठ्यक्रम निर्धारण में इस ...बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह शिक्षा-जीवन की तीनों अवस्थाओं को पूर्ण करे—(अ) कौतूहल, (ब) ...यथार्थता (स) सामान्यीकरण। इस दृष्टि से पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जो बालकों को यथार्थ ज्ञान दे और ...ज्ञान प्राप्त करके बालक वास्तविक जीवन में सफलता प्राप्त कर सके।

पाठ्यक्रम विकास के आयाम
(Approaches to Curriculum Development)

पाठ्यक्रम के प्रतिमान का सम्बन्ध उद्देश्यों से होता है। पाठ्यक्रम का प्रतिमान ऐसा हो जिससे उद्देश्यों ...की प्राप्त किया जा सके, जबकि आयाम का सम्बन्ध पाठ्यक्रम सम्बन्धी समस्याओं से होता है। ...समस्याओं के समाधान के लिए पाठ्यक्रम का प्रारूप कैसे विकसित किया जाये जिससे समस्या का हल हो ...। ...पाठ्यक्रम ... हैं। पाठ्यक्रम के प्रमुख चार आयाम होते हैं—

(1) अनुदेशन आयाम (An Instructional Approach),

(2) अनुभव आयाम (An Experience Approach),

(3) कक्षा पाठ्यवस्तु आयाम (Class Content Approach) तथा

(4) पाठ्यवस्तु आयाम (Subject Content Approach)।

इन चारो आयामो का संक्षिप्त विवरण यहां दिया गया है—

(1) अनुदेशन आयाम (An Instructional Approach)—पाठ्यक्रम के प्रारूप का माध्यम ... विकसित करने से होता है। किस प्रकार के अनुदेशन की आवश्यकता होगी? यह बालकों की क्षमताओं एवं विकास क्रम के अनुरूप होनी चाहिए। पाठ्यक्रम का विकास करने में ... समस्याओं को ध्यान रखना होता है। छोटे बालकों को अनुदेशन स्मृति के विकास के लिए ... व्यक्तिगत भिन्नताओं की दृष्टि से भी अनुदेशन का प्रारूप अलग-अलग होता है। अभिक्रमित ... बुद्धि स्तर या निम्न बुद्धि स्तर के छात्रों के लिए अधिक उपयोगी नहीं होता है।

छात्रों की विशिष्ट आवश्यकताओं की दृष्टि से भी अनुदेशन का प्रारूप अलग-अलग ... समस्या को ध्यान मे रखकर पाठ्यक्रम का प्रारूप विकसित किया जाता है। सभी प्रकार के पाठ्यक्रम ... अभिक्रमित-अुदेशन प्रयुक्त नही किया जा सकता है। इसलिए अनुदेशन की समस्या अभिगम ... लिए प्रमुख होती है। इस प्रकार पाठ्यवस्तु के लिए तीन प्रकार के अनुदेशन की व्यवस्था की जाती ... स्तर, बोध स्तर तथा चिन्तन स्तर। दूरवर्ती शिक्षा के लिए अनुदेशन का प्रारूप इस प्रकार हो जिससे ... अध्ययन द्वारा सीख सके। पाठ्यक्रम का प्रारूप दूरवर्ती शिक्षा के लिए पृथक् होना चाहिए।

(2) अनुभव आयाम (An Experience Approach)—पाठ्यक्रम की प्रभावशीलता का प्रमुख ... है कि विद्यालयी शिक्षा द्वारा छात्रों को जीवन मे कितनी उपयोगिता रही। इसका अनुभव छात्र स्वयं ... छात्रों के अनुभव और पाठ्यक्रम की उपयोगिता में समन्वय होना चाहिए। पाठ्यक्रम का प्रारूप ऐसा ... को भावी जीवन के लिए तैयार कर सकें, तभी पाठ्यक्रम उपयोगी होगा। छात्र अपने भावी जीवन ... अनुभव करेंगे।

अनुभव आयाम का दूसरा अर्थ भी अध्ययन, समय छात्रों की आवश्यकताओं, और क्षमताओं के ... होना चाहिए। इसको भी छात्र अनुभव द्वारा व्यक्त कर सकते हैं कि पाठ्यक्रम उनके अनुरूप है ... शिक्षक भी अपने अनुभव से आकलन कर सकते हैं कि पाठ्यक्रम का स्वरूप छात्रों के अनुरूप है ... भावी जीवन के लिए तैयार कर सके जिससे वे भावी जीवन मे सफल हो सके तथा समाज में ... सके। इन समस्याओं को ध्यान मे रखकर पाठ्यक्रम का प्रारूप विकसित किया जाये।

(3) कक्षा पाठ्यवस्तु आयाम (Class Content Approach)—विभिन्न कक्षाओं के विभिन्न ... पाठ्यवस्तु का स्वरूप सुनिश्चित किया जाता है। साधारणत: कक्षा आठवी तक सभी विषयों को ... से पढ़ाया जाता है। इसलिए कक्षा छ:, सात तथा आठ के विभिन्न विषय मे कितनी पाठ्यवस्तु को ... सम्मिलित किया जाए यह प्रमुख समस्या होती है। इसके बाद कक्षा नवम तथा दशम में कुछ अनिवार्य ... तथा कुछ वैकल्पिक विषय होते है। इस स्तर पर अनिवार्य विषयो तथा वैकल्पिक विषय को कितना ... को सम्मिलित किया जाए, यह भी मुख्य समस्या है। इस प्रकार पाठ्यवस्तु के स्वरूप को विभिन्न ... निर्धारण करने को पाठ्यवस्तु आयाम की संज्ञा देते है। भारतवर्ष मे इसी आयाम को प्राथमिकता ... प्रचलन भी है। प्रमाण-पत्र स्तर पास कर दिया जाता है। पाठ्यवस्तु के सीखने को दिया जाता है ... परीक्षा, बी० ए०/बी०एस-सी० तथा एम०ए०/एम० एस-सी० परीक्षा पास प्रमाण-पत्र दिया जाता ... गौण होता है।

(4) पाठ्यवस्तु आयाम (Subject Content Approach)—इस आयाम के अन्तर्गत पाठ्यवस्तु ... प्रारूप मे कक्षा-स्तर की अपेक्षा विषय स्तर को प्राथमिकता दी जाती है। प्रत्येक विषय को ...

... के क्रम में ... (Grade) कहते हैं। प्रथम, द्वितीय, ... आदि प्रत्येक ग्रेड की पाठ्यवस्तु का स्वरूप सुनिश्चित होता है। तथा उसके लिए प्रामाणिक ... प्रत्येक ग्रेड की पाठ्यवस्तु तथा परीक्षा अलग-अलग होती है। एक ग्रेड की परीक्षा पास करने ... में प्रवेश दे दिया जाता है। प्रमाण-पत्र विषय के ग्रेड पास करने का दिया जाता है। एक छात्र ... गणित में चतुर्थ ग्रेड में तथा सामाजिक विषय में दसवें ग्रेड में अध्ययन कर सकता है। ... होता है अपितु विषय का स्तरीकरण (Grading) किया जाता है और उसके अनुसार ... दिया जाता है।

... के मानदण्ड
(... of Curriculum)

... के अर्थ एवं प्रत्यय के अध्ययन करने से विदित होता है कि पाठ्यक्रम के चार मुख्य मापदण्ड ... अनुभव, कौशल तथा अभिवृत्तियाँ। इन मानदण्डों के प्रकार तथा स्वरूप को यहाँ प्रस्तुत किया ...

विषय (Subject)—पाठ्यक्रम के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाने वाले विषय—कला, संगीत, ... हिन्दी, अंग्रेजी, क्षेत्रीय भाषा, धार्मिक शिक्षा, इतिहास भूगोल, सामाजिक विज्ञान, भौतिक विज्ञान, ... बीजगणित, शारीरिक शिक्षा, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान समाजशास्त्र, स्वास्थ्य शिक्षा आदि।

अनुभव (Experiences)—पाठ्यक्रम में अधोलिखित अनुभवों को महत्त्व दिया जाता है: ... अनुभव ... धार्मिक तथा आध्यात्मिक, ललित कला, मानवता, सामाजिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक, ... औद्योगिक, आर्थिक, मूल्यांकन सम्बन्धी, उत्पादन सम्बन्धी आदि।

कौशल (Skills)—लिखना, पढ़ना, बोलना, देखना, निरीक्षण करना, विभिन्न प्रकार के यंत्रों को ... का कौशल, सुलेख, सम्प्रेषण का कौशल, अशाब्दिक सम्प्रेषण का कौशल, मानसिक क्रियाएं, ... समस्या समाधान, अनुमान लगाना, सामाजिक कौशल—स्वीकार करने का कौशल, ... कार्य करना, अन्तर्क्रिया का चयन करना, निर्णय करना, विभेदीकरण, ललित कला, शिल्प तथा ... कार्य करना आदि।

अभिवृत्तियाँ (Attitudes)—अभिवृत्तियों को भी पाठ्यक्रम के प्रारूप में सम्मिलित किया जाता ... स्व-मूल्यांकन, स्व:अनुशासन, ईमानदारी, सच्चाई, संवेदनशीलता, अवस्तुनिष्ठता, ... कल्पनाशक्ति, समायोजन की प्रवृत्ति, एकाग्रचित्त होने की प्रवृत्ति आदि।

... अच्छे पाठ्यक्रम में विषय, अनुभव कौशल तथा अभिवृत्तियों के विकास को ही महत्त्व दिया ...

बालक-केन्द्रित प्रतिमान (Child-Centred Model)—इस प्रकार के पाठ्यक्रम में विषयों को महत्त्व ... को महत्त्व दिया जाता है। पाठ्यक्रम का प्रबन्धन बालक की प्रकृति, आवश्यकता एवं रुचि के ... दिया जाता है जिससे कि उसके व्यक्तित्व का पूर्ण विकास हो सके। मनोविज्ञान इस बात पर बल ... यदि बालक की रुचियों और आवश्यकताओं पर ध्यान न दिया गया तो उसका विकास न हो सकेगा। ... मनोविज्ञान ने इस बात ऊपर बल दिया है कि पाठ्यक्रम बालकों की रुचियों एवं आवश्यकताओं के ... निर्मित किया जाये। अतः सभी आधुनिक शिक्षण पद्धतियाँ; जैसे—मॉन्टेसरी पद्धति, किण्डरगार्टन ... प्रकार के पाठ्यक्रम पर बल देती हैं।

शिल्पकला-केन्द्रित प्रतिमान (Craft-Centred Model)—इस प्रकार के पाठ्यक्रम का तात्पर्य ... अथवा कारीगरी को केन्द्र मानकर शिक्षा देने से है। दूसरे शब्दों में शिल्पकला की शिक्षा में विशेष ... जाता है। उसको प्रमुख आधार मानकर दूसरे विषयों की शिक्षा दी जाती है। बेसिक शिक्षा में इसी ... पाठ्यक्रम पर बल दिया गया है। महात्मा गांधी शिक्षा को व्यावहारिक बनाना चाहते थे। वे चाहते थे कि ... कुछ ऐसे क्राफ्टों की शिक्षा देनी चाहिए जिनके सहारे पाठशाला का खर्च निकल आये और भविष्य

मे वे उसके सहारे अपने जीविका कमा सके। अतः आधुनिक काल मे भारतवर्ष में
पाठ्यक्रम पर बल दिया जाता है।

(4) सह-सम्बन्ध प्रतिमान (Correlated Model)—इस प्रकार के पाठ्यक्रम
पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयो मे परस्पर सह-सम्बन्ध हो। वे एक-दूसरे से नितान्त पृथक्
पाठ्यक्रम का सबसे बड़ा दोष यही है कि जो विषय पढ़ाये जाते है उनमे आपस मे कोई सम्बन्ध
अलग-अलग बँटा रहता है। यही परिस्थिति दोषपूर्ण है। ज्ञान एक इकाई है। अतः उसे बाँटना
सम्बन्धित रूप मे ही देना चाहिए।

(5) मूल पाठ्यक्रम (Core Curriculum)—यह पाठ्यक्रम अमेरिका की देन है। इस
विषय ऐसे होते है जो सभी बालको के लिए अनिवार्य होते है। और बहुत-से ऐसे होते है जिन्हें
अपनी रुचि के अनुसार चुन लेते है। जो विषय अनिवार्य होते है वे ऐसे होते है जिनका सभी
महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। इस पाठ्यक्रम की कई विशेषताएँ है। पहली विशेषता यह है कि
विषयो द्वारा दिया जाता है। विषय एक-दूसरे से पृथक् नही पढ़ाये जाते वरन् कई विषय एक साथ
दूसरी विशेषता यह है कि किसी भी विषय के लए समय निश्चित नही होता। तीसरी विशेषता
बाल-केन्द्रित होता है। चौथी विशेषता यह है कि बालको को कार्यों द्वारा जीवन की वर्तमान
समस्याओ को सुलझाने हेतु प्रशिक्षण दिया जाता है।

इस पाठयक्रम का उद्देश्य बालको को व्यक्तिगत एवं सामाजिक समस्याओ से अवगत
उनको ऐसी शिक्षा देना है कि वे इन समस्याओं का समाधान कर सके। इसके अतिरिक्त इस
बालको को ऐसे अनुभव प्रदान करने का प्रयत्न किया जाता है जो उन्हें समाज के उपयोगी
बनाने मे सहायक हो। स्पष्ट है कि इस पाठ्यक्रम का लक्ष्य व्यक्ति और समाज दोनो का विकास
दृष्टि से मूल पाठ्यक्रम का विशेष महत्त्व है।

इन प्रतिमानो के विकास में तथा निर्माण में कई प्रकार के अधिनियमों का अनुसरण किया
समीक्षा यहाँ पर की गई है।

पाठ्यक्रम **का प्रक्रिया प्रतिमान**
(Process Model of Curriculum)

इस प्रकार के प्रतिमानो मे उद्देश्यो को परिभाषित नही किया जाता है। पाठ्यक्रम के
करने मे पाठ्यवस्तु के ज्ञान को ही ध्यान मे रखा जाता है। पाठ्यवस्तु की सहायता से
किया जाता है। इसे मानवता पाठयक्रम की संज्ञा भी दी जाती है। इस प्रतिमान के
उत्तरदायित्व होता है क्योंकि शिक्षा की प्रक्रिया शिक्षक द्वारा ही सम्पादित की जाती है। अतः
भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। जबकि उद्देश्य प्रतिमान के अन्तर्गत बालक की आवश्यकता
आवश्यकता और समाज की आवश्यकताओं के आधार पर उद्देश्यो का प्रतिपादन किया
प्रतिमान का प्रारूप '**मानव व्यवस्था सिद्धान्त**' (Human Organization Theory) पर
के सन्दर्भ मे शिक्षक की अन्य भूमिकाओ मे व्यवस्थापक (Manager) की भूमिका का
डेवीज ने शिक्षक को प्रबन्धक भी कहा है क्योंकि शिक्षा की प्रक्रिया भी बदलती रहती है,
एव उत्तरदायित्व भी बदलता रहता है इसके लिए पाठ्यक्रम का प्रारूप ही मुख्य आधार होता है
से होता है। मानव व्यवस्था के तीन प्रमुख सिद्धानत है जिनका विवेचन यहाँ पर किया गया है।

(1) शिक्षण अधिगम व्यवस्था प्रतिमान
(Managing Teaching Learning Model)

आई०के० डेवीज ने यह प्रत्यय शिक्षण 'अधिगम व्यवस्था' मानव उद्योग की व्यवस्था
मूल स्रोत अर्थ तथा सोपानों का विवेचन यहाँ विस्तार मे किया गया है।

...का अर्थ (Meaning of Management)—''मानव आदिकाल से जीवन को अच्छा बनाने के ... आया है, उसने अपनी कठिनाइयों को हल करने के लिए साधनों और स्रोतों का अधिकतम ... का प्रयास किया है। साधनों तथा स्रोतों को समुचित रूप में प्रयोग करने की 'व्यवस्था' करते हैं। ...विचारधारा के अनुसार, *''व्यवस्था'' का अर्थ होता है, साधनों एवं स्रोतों को निश्चित उद्देश्यों की ... प्रयोग करने के स्वरूप को 'व्यवस्था' कहते हैं।''* व्यवस्था के अन्तर्गत प्रमुख तीन युक्तियों को ... जाता है—

...साधनों तथा स्रोतों में समन्वय स्थापित किया जाता है।

...कार्यों एवं क्रियाओं का विभाजन किया जाता है।

...अधिकार एवं उत्तरदायित्व को चढ़ावक्रम (Hierarchy) में निर्धारित किया जाता है।

...ने इस 'प्रबन्धन' की व्याख्या की है। उनके अनुसार व्यवस्था का अन्तिम उद्देश्य 'विवाद को क्रम ... (minimize the conflict) है। व्यवस्था के द्वारा उस वस्तु तथा व्यक्ति के महत्त्व को कम किया ... नियोजन की सफलता में बाधा होती है। इस प्रकार व्यवस्था के द्वारा अनिश्चितता को कम करके ... स्थायित्व में वृद्धि की जाती है। व्यवस्था के आधार पर वास्तविक उपलब्धियों के सम्बन्ध में पूर्व ... जाता है। उदाहरण के लिए, पाठ्य-पुस्तकों, पाठ्य-योजनाओं तथा अभिक्रमित अनुदेशन का ... जाता है। जमें सीखने के विशेष उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है, परन्तु इसके द्वारा पाठ्यवस्तु के ... तथा छात्रों के सीखने के व्यवहार स्वरूपों के सम्बन्ध में बहुत कम जानकारी होती है। शैक्षिक ... इन्हीं स्वरूपों को समझने पर विशेष बल दिया जाता है।

...के प्रत्यय में स्थायित्व, पूर्व-कथन तथा स्वरूपों को अधिक महत्त्व देने से उद्योग तथा प्रबन्ध ... हुए हैं। यह विचारधारा 'शैक्षिक तकनीकी' के अर्थ के लिए भी अधिक उपयोगी तथा सार्थक ... उपलब्धियों के सम्बन्ध में पूर्व-कथन किया जाता है और सीखने के स्वरूपों के लिए साधनों एवं ... निर्धारित किया जाता है। इस प्रकार शैक्षिक तकनीकी शिक्षा-व्यवस्था में स्थायित्व लाती है।

...का सीधा सम्बन्ध मानव से रहा है, इसलिए मानव प्रकृति की धारणाएँ इस प्रत्यय को प्रभावित ... हैं।

मानव-प्रकृति के सम्बन्ध में अवधारणाएँ
(Assumptions about Human Nature)

...समय पूर्व मार्च तथा **साइमन** (1958) ने औद्योगिक प्रबन्ध (Industrial Management) पर कार्य ...और व्यवस्था के सिद्धान्तों का उल्लेख किया है जो वास्तव में मानव-व्यवहार की धारणाओं पर ... है। उन्होंने तीन सिद्धान्तों का उल्लेख किया है—

(1) **प्रबन्धन का परम्परागत सिद्धान्त : कार्य-केन्द्रित** (Classical Theory Organization : ...)—इस सिद्धान्त की यह अवधारणा है कि व्यवस्था के सदस्यों में कार्य करने की क्षमता होती ... निर्देशों को स्वीकार करके वे उनका अनुसरण कर सकते हैं। परन्तु उनमें कार्य के लिए स्वोपक्रम ... की क्षमता नहीं होती है, और न ही कार्यप्रणाली को किसी प्रकार प्रभावित करने की क्षमता होती ... प्राथमिक रूप से मशीन के समान कार्य करते हैं। प्रभुत्ववादी शासन-प्रबन्धन इसी सिद्धान्त पर ... है।

...सिद्धान्त ने शिक्षा-प्रणाली को अधिक प्रभावित किया है। शिक्षक, छात्रों की समस्त क्रियाओं—प्रेरणा ... करना, छात्रों के व्यवहार में सुधार लाना, तथा उद्देश्यों की प्राप्ति कराना आदि को नियन्त्रित ... केवल एक स्रोत का कार्य करते हैं और शिक्षक निर्देशों का अनुसरण करते हैं कक्षा में बोलने ... पर ही अधिक बल दिया जाता है। शिक्षण-प्रबन्धन कार्य-केन्द्रित तथा शिक्षक नियन्त्रित होती है।

कक्षा-शिक्षण में पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतीकरण पर अधिक बल दिया जाता है। छात्र की
अभिवृत्तियों को शिक्षा-प्रबन्धन में कोई स्थान नहीं दिया जाता है। छात्र के बल मशीन के
इस प्रकार के शिक्षण प्रबन्धन में छात्रों को रटना अधिक पड़ता है। इसमें स्मृति स्तर (Memory)
को ही अपनाया जाता है जिससे केवल निम्न स्तरीय ज्ञानात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति होती है।
विकास को महत्त्व नहीं दिया जाता है।

इस मानव-व्यवहार की धारणा की सीमाओं के अध्ययन से यह अनुभव किया कि
हितों के लिये नहीं की जाती है, अतः व्यवस्था में सदस्यों की भावनाओं और सम्बन्धों को
चाहिये।

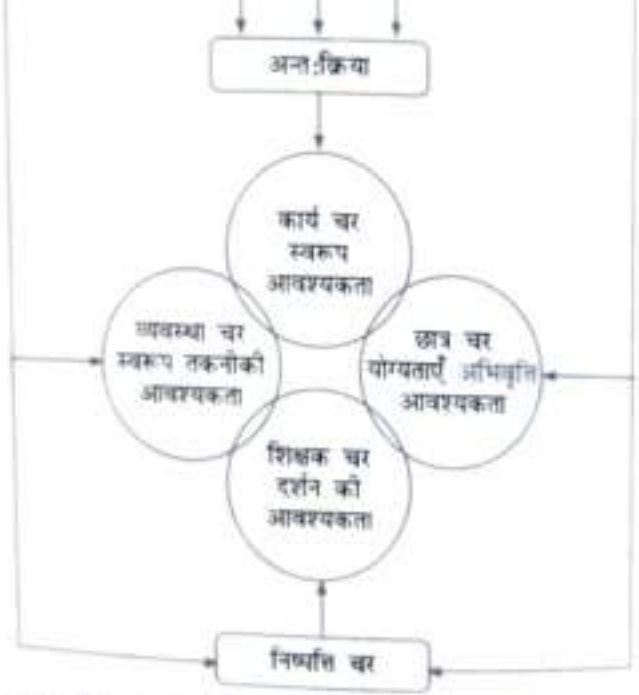

(2) व्यवस्था का मानवीय सम्बन्ध सिद्धान्त : सम्बन्ध केन्द्रित (Human Relation
Organization : Relationship-Centred)—मानव सम्बन्ध सिद्धान्त की यह अवधारणा है कि
सदस्य अपनी अभिवृत्तियों, अभिरुचियों, मूल्यों तथा लक्ष्यों को लेकर आते हैं। इसलिए व्यवस्था के
लिये उन्हें प्रेरित तथा प्रोत्साहित करना चाहिये, क्योंकि उनके लक्ष्यों तथा व्यवस्था के लक्ष्यों में
व्यवस्था व्यवहार के वास्तविक लक्ष्य के लिये अभिवृत्ति तथा नैतिक अवस्था अधिक

आज की शिक्षा तथा प्रशिक्षण प्रणाली मानव-सम्बन्ध सिद्धान्त से अधिक प्रभावित है।
कार्य-केन्द्रित सिद्धान्त के विरोध में इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है। परम्परागत शिक्षा
व्यवस्था के द्वारा छात्रों की मानसिक क्षमताओं का विकास समान स्तर पर ही किया जाता है।
सिद्धान्त के अनुसार शिक्षण तथा प्रशिक्षण व्यवस्था इस प्रकार की जाती है जो छात्रों की
अभिरुचियों, अभिवृत्तियों तथा योग्यता के अनुरूप होती है जिससे छात्रों का विकास
प्रकार की व्यवस्था में शिक्षक का उत्तरदायित्व एक निर्देशक तथा परामर्शदाता के रूप में होता है।
छात्रों को क्रियाशील रखने के लिए अवसर देना तथा प्रोत्साहित करना है। इस शिक्षण व्यवस्था में
ऐसी विधियों का प्रयोग किया जाता है जिसमें छात्रों को अधिक कार्य करना पड़ता है।
सीखने की सहायक सामग्री को अधिक प्रयोग करने के लिये बढ़ावा दिया जाता है।
के सिद्धान्तों का प्रयोग किया जाता है। सीखने की पाठ्यवस्तु की व्यवस्था इस प्रकार की
रोचक हो, प्रभावदायक हो तथा अन्ततः सफलता प्राप्त हो सके। इसमें रटने पर कम

...को अधिक महत्व दिया जाता है। अधिगम मे सार्थक-कार्यों को ही प्रधानता दी जाती है; ...कार्य, प्रोजेक्ट कार्य, खोज आदि।

...तथा मानव सम्बन्ध व्यवस्था के सिद्धान्त विरोधी विचारधारा पर आधारित एक अन्य सिद्धान्त ...का समन्वय है और मानव की प्रकृति पर आधारित है।

...**आधुनिक व्यवस्था का सिद्धान्त : कार्य तथा सम्बन्ध-केन्द्रित** (Modern Theory of ...: Task and Relationship-Centred)—इस सिद्धान्त की यह धारणा है कि व्यवस्था के ...का समाधान कर सकते है, और निर्णय भी ले सकते है। व्यवस्था के व्यवहार की व्यवस्था ...तथा चिन्तन प्रणाली के माध्यम से की जा सकती है।

...व्यवहार की प्रकृति पर आधारित होने से इन तीनो सिद्धान्तो मे कोई विरोधाभास नहीं है, परन्तु ...तथ्यों का अन्तर अवश्य है। इन सिद्धान्तो पर प्रतिपादन औद्योगिक प्रबन्ध की दृष्टि से किया गया ...इसे शिक्षण व्यवस्था मे भी प्रयुक्त किया जाता है। आधुनिक व्यवस्था आयाम (Modern ...) मे कार्य तथा मानव सम्बन्ध को भी सम्मिलित किया जाता है। वास्तव मे शिक्षा व्यवस्था ...होती है। शिक्षण तथा प्रशिक्षण मे कार्य की आवश्यकताओं तथा छात्र की आवश्यकताओं को भी ...जाता है। शिक्षक छात्र, कार्य तथा व्यवस्था चरों मे समन्वय स्थापित करता है जिसका परिणाम ...निर्धारित होती है। इस प्रत्यय को पिछले चित्र द्वारा दर्शाया गया है।

...विचारधारा का सम्बन्ध स्वतंत्र-अध्ययन, अनुदेश-प्रणाली, अनुदेश-प्रारूप तथा अनुदेशन तकनीकी (...tional Technology) से है। डेवीज के अनुसार इसे शैक्षिक-तकनीकी का एक पक्ष माना जाता है, ...शैक्षिक तकनीकी कहते है। इसमे प्रणाली आयाम (System Approach) का प्रयोग शिक्षण तथा ...किया जाता है। इस आयामो का वर्णन 'अनुदेशनात्मक प्रारूप' अध्याय में किया गया है।

शिक्षण अधिगम का प्रबन्धन
(Management of Teaching Learning)

...तथा अधिगम प्रबन्धन' का प्रत्यय **डेवीज** तथा **थॉम्स** ने दिया है। यह प्रत्यय आधुनिक सिद्धान्त ...है। यह कार्य तथा **सम्बन्ध-केन्द्रित** होता है। इसके अनुसार शिक्षण के दो प्रमुख कार्य माने जाते

...**प्रथम**, शिक्षण तथा अधिगम की क्रियाओं का प्रबन्धन करना और **द्वितीय** शिक्षण तथा अधिगम से ...के साथ प्रक्रिया करना है। **बर्ट्रेण्ड रसेल** ने इसका उल्लेख इस प्रकार किया है—

...कार्य दो प्रकार के होते हैं—*प्रथम, पदार्थ की स्थिति को पृथ्वी के अन्य सामान पदार्थों की अपेक्षाकृत ...द्वितीय, अन्य व्यक्तियो से ऐसा करने के लिए कहना।"*

...Bertrand Russell puts these activities nearly work of two kinds : altering the position ...at or near the earth's surface, relative to other such matter; second, telling other ...to do so."

...प्रथम ...कार्यों तथा प्रक्रियाओं की योजना बनाना तथा प्रबन्ध करना होता है, द्वितीय इन सभी ...है। इसलिये शिक्षक को प्रबन्धक (Teacher Manager) भी कहा जाता है। सर्वप्रथम ...शिक्षक को प्रबन्धक कहा और उसके चार प्रमुख कार्यों का उल्लेख किया है—

...सोपान—नियोजन (Planning) करना।
...सोपान—व्यवस्था (Organizing) करना।
...सोपान—अग्रसरण (Leading) करना।
...सोपान—नियन्त्रण (Controlling) करना।

इन चारों की सहायता से शिक्षण अधिगम प्रणाली की रूपरेखा (Sesign of a Learning System) की जाती है। डेवीज इन सोपानों में अधोलिखित कार्यों को सम्मिलित करते हैं–

(1) सम्पूर्ण प्रणाली का विश्लेषण करना।

(2) कार्य-विश्लेषण करना।

(3) छात्रों की योग्यता को ज्ञात करना।

(4) छात्रों के ज्ञान, कौशल तथा अभिवृत्तियों का विशिष्टीकरण करना।

(5) छात्रों की आवश्यकताओं को पहचानना।

(6) अधिगम उद्देश्यों की व्याख्या करना।

(7) अधिगम के स्रोतों की व्यवस्था करना।

(8) समुचित शिक्षण-आव्यूह का चयन करना।

(9) छात्रों को अभिप्रेरण तथा प्रोत्साहन देना।

(10) शिक्षण-प्रणाली का मूल्यांकन करना।

(11) शिक्षण-प्रणाली को क्रियान्वित करना।

(12) अधिगम प्रणाली का लगातार निरीक्षण करना है।

(13) उसमें सुधार करके अपनाना।

(14) मापन के मानदण्ड का मूल्यांकन करना।

(15) कार्यक्षमताओं के आधार मापन के मानदण्ड का विकास करना।

प्रथम सोपान : नियोजन (Planning)–इस सोपान में शिक्षक अधिगम उद्देश्यों को [illegible]
इसमें शिक्षक कार्य का विश्लेषण करके तत्त्वों में विभाजित करता है, तत्त्वों को क्रमबद्ध रूप में [illegible]
है, उद्देश्यों की परिभाषा करता है, उन्हें व्यावहारिक रूप में लिखता है, शिक्षण की समुचित आव्यूह [illegible]
करता है तथा उद्देश्यों तथा पाठ्य-वस्तु के सम्बन्ध में निर्णय लेने में सृजनात्मक तथा कल्पना शक्ति [illegible]
करता है तथा उद्देश्यों तथा पाठ्य-वस्तु के सम्बन्ध में निर्णय लेने में सृजनात्मक तथा कल्पना शक्ति [illegible]
करता है। इस सोपान के अन्तर्गत 1, 2, 3, 4, 5, 6, 14 तथा 15 क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है।
के लिये इन क्रियाओं के कौशल का महत्त्व होता है, तभी वह अधिगम प्रणाली की समस्याओं का [illegible]
सकता है और शिक्षण को प्रभावशाली बना सकता है।

द्वितीय सोपान : व्यवस्था (Organizing)–सीखने के स्रोतों तथा साधनों की व्यवस्था [illegible]
शिक्षक ही करता है, जिससे उद्देश्यों की प्राप्ति प्रभावशाली ढंग से की जाती है। मितव्ययी [illegible]
शिक्षक ही करता है, जिससे उद्देश्यों की प्राप्ति प्रभावशाली ढंग से की जाती है। मितव्ययी [illegible]
साधनों का प्रयुक्त किया जाता है। व्यवस्था के द्वारा अधिगम-वातावरण तथा अधिगम स्वरूप [illegible]
जाता है जिससे उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। शिक्षक को शिक्षा आयामों, आव्यूह, शिक्षण [illegible]
युक्तियों के सम्बन्ध में भी निर्णय लेना पड़ता है। व्यवस्था का सम्पादन से सीखने के स्वरूप [illegible]
जाता है। इस प्रकार इस सोपान के अन्तर्गत क्रिया-7 अधिगम के स्त्रोतों की व्यवस्था करने [illegible]
शिक्षण प्रणाली को क्रियान्वित करने को सम्मिलित किया जा सकता है। इसके लिये शिक्षण [illegible]
तथा अभ्यास की विशेष आवश्यकता होती है। तभी शिक्षण प्रणाली को प्रभावित रूप में प्रयोग [illegible]
है। इस सोपान की प्रमुख समस्या शिक्षण तथा अधिगम स्रोतों में समन्वय स्थापित करना है [illegible]
सोपान को प्रभावशाली तथा सफल बनाया जाता है।

तृतीय सोपान : अग्रसरण (Leading)–शिक्षक का कार्य छात्रों को अग्रसर करना है, [illegible]
शिक्षक छात्रों को अभिप्रेरणा देता है तथा प्रोत्साहित करता है जिससे वे तत्परता से सीखते हैं और [illegible]

...अनुसरण एक व्यक्तिगत प्रक्रिया है। इसमें शिक्षक के प्रेरणा देने के ढंग को विशेष महत्त्व दिया ...का कार्य छात्रों को निर्देशन देना, प्रोत्साहित करना तथा निरीक्षण करना है जिसमे छात्रों द्वारा ...प्राप्त को जाती है।

...की विविध प्रकार की युक्तियों की आवश्यकता होती है। शिक्षक को परिस्थिति को समझकर ही ...का चयन करना होता है। शिक्षक कक्षा समस्याओं के समाधान मे अपनी कल्पनाशक्ति तथा ...ओं का प्रयोग करता है। इस प्रकार इस सोपान के अन्तर्गत क्रिया-8 आव्यूह का चयन करना ...छात्रों को अभिप्रेरणा देना तथा प्रोत्साहित करने को सम्मिलित किया जाता है। इसके लिये ...सिद्धान्तों का ज्ञान तथा उसके व्यावहारिक पक्ष का बोध होना अधिक आवश्यक है। इसमे छात्रों ...को विशेष महत्त्व दिया जाता है।

...सोपान : **नियन्त्रण या मूल्यांकन** (Controlling)—नियन्त्रण का कार्य भी शिक्षक का माना ...सोपान के अभाव मे शिक्षक अधूरा समझा जाता है। इस सोपान में शिक्षक, व्यवस्था तथा अग्रसरण ...की सफलता के सम्बन्ध में निर्णय लेता है कि ये क्रियायें कहाँ तक उद्देश्यों की प्राप्ति मे सफल हो ...उद्देश्यों की प्राप्ति भली प्रकार नहीं हो सकी है तब शिक्षक को इन क्रियाओं मे सुधार करके प्रयुक्त ...है तत्पश्चात् शिक्षक पुन: मूल्यांकन करता है। यद्यपि शिक्षक व्यवस्था तथा अग्रसरण की क्रियाओं ...जाता है परन्तु उद्देश्य वहीं रहते हैं उपमें परिवर्तन नहीं किया जाता है।

...सोपान के अन्तर्गत क्रिया-11 शिक्षण प्रणाली का मूल्यांकन करना, क्रिया-12 अधिगम प्रणाली का ...तथा क्रिया-13 उनमें सुधार करके अपनाने की क्रिया को सम्मिलित किया जाता है।

...सोपान के लिये शिक्षक को मापन तथा सांख्यिकी का ज्ञान होना चाहिये तभी वह व्यवस्था तथा ...क्रियाओं का मूल्यांकन कर सकता है और उसके सम्बन्ध में निर्णय ले सकता है। विभिन्न प्रकार ...मापन विधियों का बोध तथा उनकी रचना का कौशल भी उनके लिये आवश्यक होता है।

...अनुभव-केन्द्रित प्रतिमान
(Experience-Centred Model)

...प्रकार के पाठ्यक्रम के अनुभवों को प्रधानता दी जाती है। समस्त मानव जाति के अनुभव जिनसे ...प्रेरणा मिल सके और वे अपने जीवन को उपयोगी और अच्छा बना सके, इस पाठ्यक्रम मे ...किये जाते हैं। दूसरे शब्दों मे पाठ्यक्रम में समस्त मानव जाति के अनुभवों को सम्मिलित करना ...व्यक्तित्व के विकास के लिए और सफल जीवन के लिए वर्तमान अनुभवों की अपेक्षा भूतकाल के ...अधिक उपयोगी होते हैं।

...क्रिया-केन्द्रित प्रतिमान (Activity-Centred Model)

...प्रकार का पाठ्यक्रम विभिन्न कार्यों पर आधारित होता है। बालको के लिए ऐसे कार्यों का आयोजन ...है जिनका कुछ सामाजिक मूल्य हो और जो उसके सर्वांगीण विकास मे सहायक हो। इन कार्यों का ...और बालक के परस्पर सहयोग से किया जाता है और चुनाव के समय बालको की रुचि का ...रखा जाता है। ड्यूवी महोदय क्रियाशीलता के पाठ्यक्रम के प्रमुख समर्थक है। वे बालको को ऐसे ...शिक्षा देने का सुझाव रखते है जिनके सीखने पर वे भविष्य मे समाजोपयोगी कार्य करने योग्य बना

...एकीकृत प्रतिमान (Integrated Model)

...अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition)—20वीं शताब्दी मे मनोविज्ञान के क्षेत्र मे अनेक नये ...और अधिगम के अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये। इन्हीं प्रयोगों ने गैस्टाल्टवाद (Gestaltism)

अर्थात् सम्पूर्णवाद को जन्म दिया। इस वाद के अनुसार मस्तिष्क एक इकाई है। मस्तिष्क ज्ञान को टुकड़ों में प्राप्त नहीं करता, बल्कि उसे पूर्ण रूप से ग्रहण करता है, वहीं वस्तु या विचार मस्तिष्क है जो पूर्ण अर्थ देता है।

इन मनोवैज्ञानिक खोजों ने शिक्षा को प्रभावित किया तथा गेस्टाल्टवाद के अनुसार अर्थपूर्ण एकीकृत पाठ्यक्रम तभी प्रभावशाली एवं उपयोगी होती है जब उसके विभिन्न भागों या पक्षों में

अत: एकीकृत पाठ्यक्रम से हमारा तात्पर्य उस पाठ्यक्रम से है जिसमें उसके विभिन्न विषय इस प्रकार सम्बन्धित होते हैं कि उनके मध्य कोई अवरोध नहीं होता, बल्कि उनमें एकता होती है। पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों के ज्ञान को विभिन्न खण्डों में प्रस्तुत न करके, सब विषय मिलकर इकाई के रूप में प्रस्तुत करते हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि 'ज्ञान एक है'। इसका दृष्टि से सभी विशय ज्ञानरूपी इकाई के विभिन्न अंग है। पठन-पाठन की सुविधा तथा कुछ अन्य कारण शिक्षा के पाठ्यक्रम को विभिन्न विषयों में विभक्त कर दिया गया है, किन्तु इस विभाजन का नहीं है कि बालकों को विभिन्न विषयों को अलग-अलग ज्ञान कराया जाये।

शिक्षा का उद्देश्य बालकों को ज्ञान की एकता से परिचित कराना है। यह उद्देश्य विषयों को रूप में पढ़ाने से पूर्ण नहीं हो सकता अर्थात् यह कार्य तभी सम्पन्न हो सकता है, जबकि विषयों को से सम्बन्धित किया जाये कि उनके बीच किसी प्रकार की दीवार न हो। यह दायित्व शिक्षक का है पाठ्यक्रम के सभी विषयों को सम्बन्धित करें, पाठ्यक्रम की सामग्री का जीवन से सम्बन्ध स्थापित प्रत्येक विषय-सामग्री में भी सह-सम्बन्ध स्थापित करे। इस प्रकार जो पाठ्यक्रम उक्त सभी प्रकार से युक्त हो, उसे ही 'एकीकृत पाठयक्रम' की संज्ञा दी जायेगी।

हेन्डरसन (Henderson) ने एकीकृत पाठ्यक्रम की परिभाषा इस प्रकार की है–

"एकीकृत पाठ्यक्रम वह पाठ्यक्रम है जिसमें विषयों के बीच कोई अवरोध, रुकावट अथवा होती है।"

A Curriculum in which barriers between subjects are broken down is often integrated curriculum.

हेन्डरसन के अनुसार, इस प्रकार का पाठयक्रम उन अनुभवों को देता है जिन्हे एकीकरण के लिए सुविधाजनक समझा जाता है तथा जिससे बालक उस पाठ्य-वस्तु को सीखते हैं जो अनुभवों में एवं उनके पुनर्निर्माण में सहायक होती है। इस प्रकार का अनुभव-प्रधान पाठ्यक्रम विषय को रखने तथा उनको शीर्षकों में बाँटने का अन्त करता है। ऐसे विषयों को स्थान देता है जो बालक के केन्द्र होते हैं।

एकीकृत पाठयक्रम की विशेषताएँ (Characteristics of Integrated Model)—एकीकृत की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

(1) इस पाठ्यक्रम में ज्ञान को समग्र रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
(2) इसके माध्यम से छात्र विभिन्न विषयों का ज्ञान एक साथ प्राप्त करते हैं।
(3) यह पाठ्यक्रम अनुभव-केन्द्रित होता है।
(4) इससे बालकों को जीवनोपयोगी शिक्षा मिलती है।
(5) इसमें छात्रों की रुचियों को महत्त्व दिया जाता है।
(6) इस पाठ्यक्रम से शिक्षकों का उत्तरदायित्व एवं कार्यभार बढ़ जाता है।
(7) इस पाठ्यक्रम की सफलता के लिए शिक्षक को पर्याप्त एक व्यापक अध्ययन की होती है।
(8) इसमें छात्रों के पूर्व-ज्ञान को सम्बन्धित करने में आसानी होती है।

पाठ्यक्रम में एकीकरण का अभाव (Lack of Integration in Existing Curriculum)– भारतवर्ष के विद्यालयों में परम्परागत पाठ्यक्रम का प्रचलन है। शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर जो पाठ्यक्रम प्रयोग में लाया जा रहा है, उसमें ज्ञान एवं अनुभव के समग्र रूप में विभिन्न विषयों में बाँट दिया जाता है। ज्ञान की एकता का अभाव रहता है तथा विभिन्न विषय एक-दूसरे से सम्बन्धित नहीं होते हैं। परिणामस्वरूप बालकों को वास्तविक ज्ञान नहीं मिला पाता है। उदाहरण के लिए, प्राथमिक विद्यालयों में सामान्यतः एक घण्टा पुस्तों को पढ़ने में, 20 मिनट तक अंकगणित के प्रश्न करने में, 30 मिनट लिखने का उच्चारण करने में तथा 20-30 मिनट सुलेख लिखने में व्यतीत किया जाते हैं, किन्तु इन सभी क्रियाओं का परस्पर में कोई सम्बन्ध नहीं होता है। इससे कोई भी विचार छात्रों को एक साथ नहीं मिल पाता है।

एकीकृत पाठ्यक्रम के उपयोग में कठिनाइयाँ (Diffuculties in the use of Integrated Curriculum)–एकीकृत पाठ्यक्रम के निर्माण एवं प्रायोग में निम्नलिखित कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है–

1. बालकों की रुचियों को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम में एकीकरण बहुत अधिक कठिन है।
2. इसके द्वारा छात्रों की विशिष्ट रुचियों का विकास कठिन होता है।
3. इससे ज्ञान की एक निश्चित रूपरेखा नहीं बन पाती है।
4. इस पाठ्यक्रम में सभी विषयों का एक साथ एकीकरण कर सकना असम्भव होता है।
5. इस प्रकार के पाठ्यक्रम में शिक्षण में बहुत अधिक समय लगता है तथा शिक्षक का कार्यभार बढ़ जाता है।
6. माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर पर विषयों का एकीकरण उचित नहीं होता है।
7. इस पाठ्यक्रम के प्रयोग के लिए प्रभावशाली शिक्षकों का बहुत अधिक अभाव है।
8. अधिकांश शिक्षक इसके उपयोग के लिए तैयार नहीं होते हैं तथा इसके बहुत अधिक असुविधा का अनुभव करते हैं।

इन कठिनाइयों के होते हुए भी एकीकृत पाठ्यक्रम का विचार अपने आपमें महत्त्वपूर्ण है। शिक्षकों को इसके विषय में यथासम्भव एकीकरण का प्रयास करना चाहिए जिससे बालकों को पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने में सहायता हो।

(III) पाठ्यक्रम की परिस्थिति प्रतिमान (Situational Model of Curriculum)

इस प्रतिमान के प्रारूप को विकसित करने में शिक्षा तथा विद्यालय को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों पर बल दिया जाता है। आरम्भ में वर्तमान परिस्थितियों का विश्लेषण किया जाता है। विषलेषण इस बात पर आधारित होता है कि विद्यालय एवं शिक्षा की परिस्थितियों में विकास एवं सुधार करना सम्भव है। इन परिस्थितियों के बाह्य तथा आन्तरिक घटकों की समीक्षा एवं मूल्यांकन किया जाता है तथा प्रभावित करने वाले घटकों को पहिचान की जाती है। इस प्रकार यह प्रतिमान में 'प्रणाली विश्लेषण' (System Analysis) आयाम का प्रयोग किया जाता है। पणाली विश्लेषण सुधार एवं विकास के लिए एक वैज्ञानिक विधि है। इसकी सहायता से दो प्रकार के घटकों की पहिचान की जाती है–

1. आन्तरिक घटक (Internal Factors) तथा
2. बाह्य घटक (External Factors)।

इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

1. **आन्तरिक घटक** (Internal Factors)–आन्तरिक घटक कक्षा शिक्षण एवं विद्यालय की व्यवस्था को प्रभावित करते हैं। इन आन्तरिक घटकों में छात्रों की अभिवृत्तियाँ एवं रुचियों, शिक्षण

कौशल एवं अध्यापकों की प्रवणता, नैतिकता एवं अभिवृत्तियाँ विद्यालय में उपलब्ध साधन (पुस्तकालय, वाचनालय आदि) तथा विद्यालय का वातावरण आदि को सम्मिलित किया जाता है। अतिरिक्त परीक्षा प्रणाली, पाठ्य-पुस्तकें तथा व्यवस्था भी प्रभावित करने वाले आन्तरिक घटक हैं। इन उपलब्ध साधनों की दृष्टि से पाठ्यक्रम की रचना को 'परिस्थिति प्रतिमान' कहते हैं। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को माध्यमिक विद्यालयों में आरम्भ करने का सुझाव दिया है, परन्तु व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के लिए प्रशिक्षित अध्यापक उपलब्ध न होने के कारण कोई विकास एवं सुधार नहीं हो सका। व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के लिए शिक्षण परिस्थितियाँ भिन्न प्रकार की होनी चाहिए। आन्तरिक घटकों को ध्यान में रखकर पाठ्यक्रमों का निर्माण करना आवश्यक है।

(2) बाह्य घटक (External Factors)—बाह्य घटक भी शैक्षिक परिस्थितियों को प्रभावित करते हैं। सामाजिक परिवर्तन, राजनैतिक व आर्थिक परिवर्तन, अभिभावकों की अभिवृत्तियों एवं आकांक्षाओं में परिवर्तन, समाज की अपेक्षा में परिवर्तन तथा विषयों (Discipline) का अभिर्भाव आदि को बाह्य घटकों के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाता है। इसके अतिरिक्त व्यावहारिक समस्याएँ भी प्रभाव डालती हैं। उनके प्रभाव का विश्लेषण करना अपेक्षाकृत कठिन होता है। कक्षा अनुभवों छात्रों एवं अध्यापकों की प्रतिक्रियाओं से पहिचाना जा सकता है। लक्ष्यों की दृष्टि से बाह्य घटकों की पहिचान की जाती है। स्वतन्त्रता से पूर्व इतिहास में राजा-महाराजाओं के कार्यकलापों का विवरण दिया जाता था। परन्तु स्वतन्त्रता के बाद के इतिहास का उद्देश्य राष्ट्रीयता, राष्ट्रीय एकता भाव विकसित करना होता है। इसलिए शिक्षक कक्षाओं में ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर सके, जिससे उनमें सही दृष्टिकोण का विकास किया जा सके। इसके लिए इतिहास की पाठ्यवस्तु में परिवर्तन करना होगा। कक्षा परिस्थिति को ही महत्त्व देना होगा।

नई शिक्षा नीति के अन्तर्गत नवोदय विद्यालय, व्यावसायिक शिक्षा, उच्च शिक्षा के प्रशासन, प्रशिक्षण, दूरवर्ती शिक्षा आदि के सुझाव दिये हैं। परिणामस्वरूप इन सुझावों को लागू भी किया गया है। नये आयामों में नीवन परिस्थितियों को उत्पन्न करना होता है। इसके सम्पादन करने पर जो समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। इनकी दृष्टि से पाठ्यक्रमों में सुधार करने के लिए इन परिस्थितियों को दृष्टिगत रखना होगा, तभी प्रभावी एवं सार्थक बना सकेंगे। शैक्षिक परिस्थिति एवं पाठ्यक्रम के प्रतिमान में विकास एवं सुधार में एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। इसे बाह्य एवं आन्तरिक घटक परिस्थिति प्रतिमान भी कहा जाता है। उद्देश्यों का प्रतिमान शिक्षक एवं छात्रों की क्रियाओं एवं परिस्थितियों के रूप में किया जाता है।

(1) विषय-केन्द्रित प्रतिमान (Subject-Centred Model)—इस प्रकार के पाठ्यक्रम का आशय विषयों के ज्ञान को पृथक्-पृथक् रूप में देने से है। सभी विषयों के ज्ञान को अलग-अलग निश्चित कर लिया जाता है और उसी के अनुसार पुस्तकें बन जाती हैं। उन्हीं पुस्तकों से बालक विषय का ज्ञान प्राप्त करते हैं। अधिकतर इसी प्रकार का पाठ्यक्रम काम में लाया जाता है। इस प्रकार के पाठ्यक्रम में बालकों की अपेक्षा विषयों को अधिक महत्त्व दिया जाता है क्योंकि इस पाठ्यक्रम में पुस्तकों पर बल दिया जाता है। इसलिए इसे 'पुस्तक-केन्द्रित पाठ्यक्रम' भी कहते हैं। इस प्रकार के पाठ्यक्रम में पाठ्यवस्तु पहले से निश्चित होती है। शिक्षक को यह ज्ञान रहता है कि उसे क्या पढ़ाना है और शिक्षार्थी यह जानते हैं कि उनहें क्या क्या पढ़ना है। कोर्स निश्चित होता है उसी में बालकों की पीक्षा ली जाती है। परीक्षा यह भी मालूम हो जाता है कि बालक ने कितना सीखा है और उनकी क्या योग्यता है।

पाठ्यक्रम के आयाम
(Approaches of Curriculum)

मनोविज्ञान तथा शिक्षा के शोध कार्य से सिद्ध हो चुका है कि मनस् (Mind) एक समन्वित इकाई है। विभिन्न विषयों के सीखने के लिए मस्तिष्क में अलग-अलग भाग नहीं है अपितु शिक्षण की सुविधा के लिए ज्ञान के विषयों में बाँट लिया है। बालक तथा बालिकाओं के विकास पर सभी विषयों का प्रभाव सामूहिक

...विषयों का समग्र रूप है। बालक के ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक पक्षों के विकास ... पर पड़ता है; अत: इतिहास शिक्षण में अन्य विषयों में सम्बन्ध स्थापित करते हुए ... महत्त्व दिया जाता है शिक्षा में इस सम्बन्ध के प्रत्यय को सर्वप्रथम हरबार्ट ने दिया ... के समर्थक थे। उनका कहना है कि सम्पूर्ण मनस् का विकास तभी सम्भव हो सकता ... में सह-सम्बन्ध स्थापित करते हुए पढ़ाया जाए। इस प्रत्यय के प्रयोग के लिए शिक्षण ... किया जाए और पाठ्यक्रम विषय-केन्द्रित होना चाहिए। शिक्षण में पाठ्यवस्तु की व्यापकता ... दृष्टि से विशेष महत्त्व है। पाठ्यक्रम के मुख्य आयाम हैं–

... आयाम (Correlation Approach),

... आयाम (Integrated Approach),

... व सामयिक आयाम (Concentric and Periodic Approach),

... आयाम (Spiral Approach),

... आयाम (Unit Approach),

... व प्रकरण सम्बन्धी आयाम (Chronological Approach) तथा

... व प्रतीपगमन आयाम (Progressive Vs Regressive Approach)।

... पाठ्यक्रम की व्यवस्था हेतु इन प्रमुख आयामों का विस्तृत विवरण यहाँ दिया गया है–

(1) सह-सम्बन्ध आयाम (Correlation Approach)

... एक सामाजिक विषय माना जाता है। इसलिए शिक्षण पृथक् रूप में नहीं किया जा सकता ... की विषय-वस्तु में सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों का ... है, अत: अन्य सामाजिक विषय से सह-सम्बन्ध स्थापित करना आवयक हो जाता है। तभी ... के पाठ्यवस्तु का व्यापक रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। सामाजिक विज्ञान की विषय ... विषयों का समावेश होता है तथा सभी प्राकृतिक विज्ञान का भी समन्वय किया जाता है। ... अध्ययन में गुणात्मक तथा परिणामात्मक प्रयास किया जाता है, इसलिए गणित विषय के ... होता है।

... का **अर्थ**–सह-सम्बन्ध से अभिप्राय विभिन्न विषयों के परस्पर समान आधारों पर सम्बन्धों ... पाठ्यक्रम में विषयों को इस प्रकार से व्यवस्थित किया जाता है, जिससे एक विषय के ... दूसरा विषय का ज्ञान सहायक हो के। सर्वप्रथम **हरबार्ट** ने स्कूल के पाठ्य-विषयों में ... ज्ञान का सुझाव दिया।

... सह सम्बन्ध प्रत्यय के लिए अधोलिखित **सिद्धान्तों** को ध्यान में रखना चाहिए–

... **व्यापकता का सिद्धान्त**–सामाजिक विज्ञान शिक्षण में अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध ... से पाठ्यवस्तु को बोध व्यापक रूप में दिया जाता है। शिक्षण में विभिन्न विधियों तथा ... होते हुए ज्ञान की एकता अन्तर्निहित होती है। उसी प्रकार इतिहास की विषय-वस्तु ... निहित है।

... **व्यावहारिकता का सिद्धान्त**–सामाजिक विज्ञान शिक्षण को केवल सूचना स्तर तक ही ... चाहिए अपितु छात्रों के व्यवहार-परिवर्तन पर बल दिया जाए। अत: सामाजिक विज्ञान को ... की अन्य क्रियाओं से सम्बन्ध स्थापित करते हुए प्रस्तुत करना चाहिए, जिससे छात्रों को ... भी मिल सके। क्योंकि सभी विषयों की शिक्षा का उद्देश्य भावी जीवन की तैयारी है। अत ... पर देने के लिए अन्य विषयों से सम्बन्ध स्थापित करते हुए पढ़ाना चाहिए।

(3) समय की बचत का सिद्धान्त—इस प्रत्यय के प्रयोग से शिक्षण में कम समय में अधिक को व्यापक रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। विषय की सूक्ष्मताओं एवं गहनता को व्यापक रूप में सकता है। सामाजिक अध्ययन के शिक्षण में कालक्रम अनुभूति के लिए छात्रों के मापन का भी आवश्यक है, ग्राफ के ज्ञान से उत्थान, पतन का कालक्रम के रूप में बोध हो सकता है। इतिहास शिक्षण मापन तथा ग्राफ के दक्षिण भारत की प्राकृतिक दशा का ज्ञान दिया जा सकता है। इस प्रकार समय बचत होती है।

(4) विषय की रोचकता का सिद्धान्त—सामाजिक विज्ञान के शिक्षण में सह-सम्बन्ध से छात्र रुचियों एवं स्वाभाविक प्रवृत्तियों का विकास होता है। छात्रों में इस प्रकार की अन्तर्दृष्टि का विकास होता एक विषय के तथ्यों को समझने के लिए दूसरे विषय की सहायता ली जा सकती है, इस प्रकार पर एक-दूसरे के पूरक है विरोधी नहीं। विषय की नीरसता भी समाप्त हो जाती है और छात्रों को विषय उत्पन्न होती है। छात्रों में उदारता का भाव विकसित होता है।

(अ) आकस्मिक सह-सम्बन्ध—इस प्रकार से सहसम्बन्ध में पूर्व-योजना नहीं बनायी जाती है, शिक्षक प्रस्तुतीकरण के समय जहाँ आवश्यकता समझता है स्पष्टीकरण के लिए स्वाभाविक रूप से विषयों के प्रसंग तथा सन्दर्भ को धाराप्रवाहिक रूप में प्रस्तुत करता है; जैसे—भारत और चीन का शिक्षण के समय हिमालय को उत्तर की सुरक्षा के महत्त्व की कविता सुनाने लगता है कि अतीत काल से सीमा पर प्रहरी के रूप में कार्य कर रहा है, परन्तु यह इतिहास की प्रथम घटना है, जबकि उत्तर की ओर चीन ने आक्रमण किया।

(ब) आयोजित सह-सम्बन्ध (Planned Correlation)—इस विधि में शिक्षक अन्य विषयों के तथा सदर्भों की पाठ्यवस्तु से सम्बन्धित प्रकरणों की योजना पहले से तैयार करता है। उनको पहले तैयार जाता है अन्य शिक्षण सामग्री की पूर्व व्यवस्था की जाती है; जैसे—चीन और भारत के युद्ध में शिक्षण के के मानचित्रों जिसमें **मैकमोहन** रेखा तथा पहाड़ों की ऊँचाई तथा शीत हिम के सम्बन्ध में उल्लेख करना प्रकार से सह-सम्बन्ध का शिक्षण में विशेष महत्त्व है।

सह-सम्बन्ध हेतु सावधानियाँ

इस आयाम में अधोलिखित सावधानियाँ बरतनी चाहिए—

(1) सामाजिक विज्ञान के उपरोक्त विषयों से सह-सम्बन्ध स्थापित करते समय यह ध्यान रखा कि उन्हीं प्रकरणों में सह-सम्बन्ध स्थापित किया जाए जो स्वाभाविक रूप में परस्पर सम्बन्धित हो।

(2) बालकों की रुचियों, मानसिक स्तर, शैक्षिक स्तर के अनुकूल ही सह-सम्बन्ध के लिए प्रसंग प्रतिपादन किया जाए।

(3) सह-सम्बन्ध स्थापित करते समय उचित प्रविधियों और सहायक सामग्री व्यवस्था करनी चाहिए।

(4) पाठ्य विषय में स्वाभाविक रूप में रोचकता, व्यापकता तथा बोधगम्यता लाने का प्रयास किया जाए।

(5) बालों में सामाजिक गुणों का विकास होना चाहिए।

(6) ज्ञान ग्रहण करने की प्रक्रिया मितव्ययी होनी चाहिए।

(7) बालकों में एक साथ विविध विषयों के ज्ञान से व्यावहारिक दक्षता आती है।

(8) सह-सम्बन्ध आकस्मिक तथा पूर्व-आयोजित दोनों ही विधियों से होना चाहिए।

(9) अनावश्यक प्रकरणों में सह-सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करते समय तथा शक्ति का अपव्ययी होता है।

...विषयान्तर वार्ता नहीं होनी चाहिए क्योंकि छात्र उनको पाठ से सम्बन्धित कर लेते

...मनोवैज्ञानिक होना चाहिए। सह-सम्बन्ध शिक्षा अध्यापक कुशलता तथा योग्यता ...पर ही निर्भर होती है।

...विषय को प्रधानता नहीं दी जाती है अपितु सभी विषयों में समान रूप से अन्तर्धारा ...विषय का स्वतन्त्र अस्तित्व रहता है। यह आयाम सामाजिक विज्ञान के लिए सबसे

(2) एकीकृत आयाम
(Integrated Approach)

...से तात्पर्य उस पाठ्यक्रम से है, जिसमें उसके विभिन्न विषय एक-दूसरे से इस प्रकार ...बीच कोई अवरोध नहीं होता, बल्कि उनमें एकता होती है। इस प्रकार पाठ्यक्रम के ...विभिन्न खण्डों में प्रस्तुत न करके, सब विषय मिलकर ज्ञान को एक इकाई के रूप ...का मानना है कि '**ज्ञान एक है**'। इस दृष्टि से पाठ्यक्रम के सभी विषय ज्ञानरूपी ...पठन-पाठन की सुविधा तथा कुछ अन्य व्यावहारिकताओं के कारण शिक्षा के ...में विभक्त कर दिया गया है, किन्तु इस विभाजन का यह अर्थ नहीं है कि बालकों ...अलग-अलग ज्ञान कराया जाए।

...ने एकीकृत पाठ्यक्रम की परिभाषा इस प्रकार की है—

...वह पाठ्यक्रम है, *जिसमें विषयों के बीच कोई अवरोध, रुकावट अथवा दीवार*

...which barriers between subjects are broken down in often called an

–Henderson

...इस प्रकार का पाठ्यक्रम उन अनुभवों को देता है जिन्हें एकीकरण की प्रक्रिया के ...तथा जिससे बालक उस पाठ्यवस्तु को सीखते हैं जो अनुभवों को समझने में ...सहायक होती है। इस प्रकार का अनुभव-प्रधान पाठ्यक्रम विषय को अलग-अलग ...बाँटने का अन्त करता है एवं ऐसे विषयों को स्थान देता है जो बालक की रुचि के

...की विशेषताएँ

...की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

...में ज्ञान को समग्र रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

...में छात्र विभिन्न विषयों का ज्ञान एक साथ प्राप्त करते हैं।

...अनुभव-केन्द्रित होता है।

...को जीवनोपयोगी शिक्षा मिलती है।

...की रुचियों को महत्त्व दिया जाता है।

...में शिक्षकों का उत्तरदायित्व एवं कार्य-भार बढ़ जाता है।

...की सफलता के लिए शिक्षक को पर्याप्त एवं व्यापक अध्ययन की आवश्यकता

...के पूर्व-ज्ञान से नवीन ज्ञान को सम्बन्धित करने में आसानी होती है।

...आयाम की विस्तृत चर्चा इस पुस्तक के द्वितीय अध्याय में की जा चुकी है।

(3) केन्द्रीभूत व सामयिक आयाम
(Approaches of Concentric Vs Periocdic)

संसार के कुछ राष्ट्रों की सभ्यता प्राचीन है; जैसे—मिश्र तथा रोम। इसलिए इनका इतिहास प्राचीन काल में आरम्भ हुआ था। शिक्षण की दृष्टि से यह सोचना तथा निश्चय करना पड़ता है कि इतिहास प्रत्येक कक्षा में पढ़ाया जाए अथवा इसे कई भागों में विभक्त करके विभिन्न कक्षाओं में खण्ड का अध्ययन कराया जाए तब इसे सामाजिक आचरण (Periodic Treatment) कहते हैं। इतिहास को एक ही कक्षा में पढ़ने के आयाम को केन्द्रीभूत (Concentric) विधि कहते हैं।

(i) केन्द्रीभूत आयाम
(Concentric Approach)

सामाजिक अध्ययन शिक्षण में केन्द्रीभूत आयाम का विरोध महत्त्व है। इस आयाम में पाठ्य-वस्तु प्रत्येक शिक्षा स्तर पर पूर्ण रूप से लिया जाता है; जैसे—इतिहास की विषय-वस्तु को समग्र रूप से कक्षा में पढ़ाया जाए, विषय की गहनता और व्यापकता भी बढ़ायी जाए, जिससे इतिहास की विषय-वस्तु के मानसिक विकास के अनुरूप हो सके।

शिक्षण सिद्धान्त—मुख्य सिद्धान्त अधोलिखित हैं—

(1) यह अयाम मनोविज्ञान के सिद्धान्तों पर आधारित है।

(अ) समस्त ज्ञान समग्र रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

(ब) सम्पूर्ण से खण्ड सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

(2) बालकों की स्मरण-शक्ति का विकास होता है और विषय के प्रति रुचि उत्पन्न होती है।

(3) सामाजिक विज्ञान विषय का बोध अधिक व्यापक रूप में दिया जाता है।

विशेषताएँ—मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

(1) इस विधि का विशेष लाभ यह है कि ऐतिहासिक घटनाओं का क्रमबद्ध रूप से बोध हो जाता है।

(2) इस विधि से छात्रों की निर्णय-शक्ति का विकास हो जाता है।

(3) विषय-वस्तु का बोध समग्र रूप में कराया जाता है, जिससे घटनाओं में सम्बन्ध तथा कारण प्रभाव को समझने की सुगमता होती है।

(4) यह विधि गेस्टाल्ट मनोविज्ञान के सिद्धान्तों पर आधारित है।

(5) समग्र ज्ञान के वर्तमान को भली प्रकार समझ सकते हैं।

सीमाएँ—इस विधि की मुख्य सीमाएँ अधोलिखित हैं—

(1) छोटी कक्षाओं में विषयवस्तु का क्षेत्र अधिक हो जाता है और उच्च कक्षाओं में अधिक गहनता और गहनता से अध्ययन नहीं हो पाता है।

(2) आधुनिक समय में इतिहास का क्षेत्र इतना व्यापक हो गया है कि समग्र विषय-वस्तु को एक में पढ़ाना सम्भव नहीं है। छोटी-छोटी घटनाओं पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है।

(ii) सामयिक आयाम
(Periodic Approach)

इस आम में पाठ्य-सामग्री को प्रत्येक शिक्षा स्तर पर पूर्ण रूप से लिया जाता है; इस आयाम में इतिहास की विषय-वस्तु को युगों (Periodic Treatment) में विभक्त कर लिया जाता है। विभिन्न कक्षाओं में एक-एक युग के इतिहास को पढ़ाया जाता है। इस आयाम के समर्थकों का विचार है कि

...कुछ ऐसी घटनाएं तथा तिथियां होती हैं, जहां इतिहास को सुगमता से विभक्त किया जा

...सिद्धान्त—मुख्य सिद्धान्त इस प्रकार हैं—

...खण्ड में सम्पूर्ण सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

...खण्डों के रूप में प्रदान किया जाता है जो व्यवहारवादियों के सिद्धान्तों पर आधारित है।

...को सोचने के लिए अभिप्रेरणा मिलती है।

...कल्पना, विचार व निर्णय-शक्ति का विकास होता है।

...—इसकी विशेषताएं इस प्रकार हैं—

...मनोविज्ञान के सिद्धान्तों पर आधारित है।

...छात्रों में इतिहास के प्रति रुचि उत्पन्न होती है।

...छोटी-छोटी घटनाओं का बोध होता है, जो छात्रों के विकास की दृष्टि से अधिक ...होती है।

...में कल्पना एवं निर्णय-शक्ति का विकास होता है।

...दोष इस प्रकार हैं—

...आयाम द्वारा वर्तमान को समझना कठिन होता है।

...कक्षाओं में अलग-अलग काल का बोध कराया जाता है। इसलिए इतिहास की ...का पूर्ण बोध नहीं होता है, क्योंकि पूर्व काल का आरम्भ में विवेचन नहीं हो पाता है।

...का बोध समान स्तर पर नहीं हो पाता क्योंकि उच्च कक्षाओं में विषय की व्यापकता ...है। दूसरे, छात्रा पिछले अध्ययन को सामान्यत भूल जाते हैं।

...युगों के क्रम में विषय का विभाजन किया जाता है, परन्तु छात्रों को क्रम में घटनाओं ...करना कठिन होता है।

...सावधानियाँ—प्रयोग में यह सावधानी रखनी चाहिए—

...रूप से सामयिक आयाम में शिक्षण किया जाए, उस समय पूर्व काल का सूक्ष्म विवेचन ...में किया जाए।

...शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए दोनों विधियों का प्रायेग एक साथ किया जा सकता है।

...आयाम में महत्त्वपूर्ण छोटी-छोटी घटनाओं का उल्लेख भी प्रस्तुत किया जाए।

...आयाम में अनावश्यक छोटी-छोटी घटनाओं का उल्लेख न किया जाए।

(4) कुण्डलीय आयाम
(Spiral Approach)

...विज्ञान के अध्ययन एवं अध्यापन में अनेक आयामों तथा आव्यूहों का प्रयोग किया जाता है, ...सम्बन्ध में ही सभी प्रकार की जानकारी दी जाती है। सामाजिक विज्ञान अध्ययन तथा शिक्षण ...किया है, परन्तु सामाजिक विज्ञान के अध्ययन एवं अध्यापन का मुख्य लक्ष्य मानवीय विकास ...है। मैथिलीशरण गुप्त ने अपनी पुस्तक 'भारत भारती' में उल्लेख किया है—"**हम कौन थे और क्या होंगे अभी, आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएं सभी।**" यह कथन ...की पाठ्यवस्तु, अध्ययन और अध्यापन के क्षेत्र को प्रदर्शित करता है। यह कथन मानवीय ...भविष्य के नियोजन हेतु दिशा प्रदान करता है। अतीत के आधार पर वर्तमान को समझे और ...नियोजन करें। मानवीय विकास क्रम में आर्थिक विकास इसमें भौगोलिक परिस्थितियों तथा

प्रशासनिक, प्रणाली का योगदान समझें। इतिहास के अन्तर्गत इसमें घटनाओं तथा तथ्यों का वर्णन करते हैं, अपितु उस काल में आर्थिक व सामाजिक विकास का भौगोलिक परिस्थितियों तथा प्रशासनिक प्रणाली को किस प्रकार प्रभावित किया। इस प्रकार के अध्ययन आयाम को 'कुण्डलीय' (Spiral) की संज्ञा दी जाती है।

कुण्डलीय आयाम का अर्थ
(Meaning of Spiral Approach)

सामाजिक विज्ञान के अन्तर्गत किसी युग अथवा काल का ऐतिहासिक अध्ययन इस प्रकार किया जाता है, उस युग के आरम्भ में आर्थिक तथा सामाजिक विकास की कैसी स्थिति थी? और समय परिवर्तन के अनुसार भौगोलिक परिस्थितियों तथा राजनैतिक गतिविधियों तथा प्रणाली को किस प्रकार प्रभावित किया। मानवीय विकास को आर्थिक, सामाजिक, भौगोलिक तथा राजनैतिक परिस्थितियाँ प्रभावित करती रही हैं। इस प्रकार कालक्रम के अनुसार मानवीय विकास के संचयी अध्ययन को कुण्डलीय आयाम कहते हैं।

सह-सम्बन्ध, एकीकरण तथा कुण्डलीय आयाम में अन्तर
(Difference Among Correlationi Integration and Spiral Approach)

कुण्डलीय आयाम को समझने के लिए सह-सम्बन्ध, एकीकरण में अन्तर समझना आवश्यक है–

(1) सह-सम्बन्ध आयाम में सामाजिक विषय के किसी घटक के किसी प्रकरण का शिक्षण करते समय अन्य विषय के समानान्तर प्रकरण का उल्लेख करते है, जिससे उसका अधिक बोध हो सके। जबकि कुण्डलीय आयाम किसी काल तथा अवधि में आर्थिक व सामाजिक विकास को भौगोलिक तथा राजनीति या प्रशासन प्रणाली ने किस प्रकार प्रभावित किया है, इसका अध्ययन करता है।

(2) एकीकृत आयाम में सामाजिक समस्या के समाधान के सभी विषय का बोध कराया जाता है। इसमें योजना विधि को प्रयुक्त करते हैं। अनुभव तथा क्रियाओं के माध्यम से सामाजिक विषयों का बोध कराते है, जबकि कुण्डलीय आयाम में कालक्रम के अनुसार आर्थिक व सामाजिक विकास को भौगोलिक तथा राजनैतिक प्रशासन प्रणाली के सन्दर्भ में अध्ययन किया जाता है।

कुण्डलीय आयाम के अधिनियम
(Principles of Spiral Approach)

कुण्डलीय आयाम के अधोलिखित अधिनियम है–

(1) पाठ्यवस्तु की सार्थकता का बोध करना है।
(2) सामाजिक अध्ययन की उपयोगिता का ज्ञान देना है।
(3) मानवीय आर्थिक व सामाजिक विकास में भौगोलिक तथा प्रशासन प्रणाली के योगदान का बोध होता है।
(4) कालक्रम के अनुसार मानवीय आर्थिक तथा सामाजिक विकास में संचयी ज्ञान को प्रस्तुत करना है।
(5) अवधि या कालक्रम के सन्दर्भ में आर्थिक, सामाजिक, भौगोलिक तथा प्रशासनिक प्रणाली के योगदान तथा प्रभाव को बोध करना है।
(6) सामाजिक विकास तथा परिवर्तन का बोध विशिष्ट कालक्रम मे करना है।

कुण्डलीय आयाम के लाभ
(Advantages of Spiral Approach)

सामाजिक अध्ययन के पाठ्यक्रम विकास तथा शिक्षण प्रक्रिया में निम्नांकित उपादेयता है–

...आयाम में अन्य आयाम; जैसे—सह-सम्बन्ध व एकीकृत को सम्मिलित कर लेते हैं। यह एक ...आयाम है।

...अध्ययन में उसके विभिन्न घटकों की सार्थकता तथा उपादेयता का बोध होता है।

...आयाम को कालक्रम-केन्द्रित मानते हैं।

...अध्ययन की मूल धारणा के अनुरूप शिक्षण का आयोजन किया जाता है। विकास क्रम ...प्रधानता दी जाती है।

...सामाजिक अध्ययन के मूल उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है।

...अध्ययन का मूल केन्द्र 'मानव' है, उसी से सम्बन्धित पाठ्यक्रम तथा शिक्षण का ...किया जाता है।

...आयाम की सीमाएँ
(...s of Spiral Approach)

...के लाभ एवं विशेषताओं के साथ कुछ सीमाएँ भी हैं। मुख्य सीमाएँ इस प्रकार हैं—

...आयाम का प्रत्यय जटिल है।

...प्रकार के शिक्षण में इसका उपायेग नहीं कर सकते हैं।

...को इस आयाम को समझने में कठिनाई होती है।

...आयाम की प्रविधियों तथा प्रारूप का स्वरूप विकसित नहीं है।

...आयाम के उपायेग हेतु सुझाव
(...ns for Spiral Approach)

...आयाम के उपयोग में निम्नलिखित बातों को ध्यान रखना चाहिए—

...आयाम के प्रत्यय एवं प्रारूप का सही बोध होना चाहिए।

...काल में प्रशिक्षक को इसका अभ्यास करना चाहिए।

...विशिष्ट कालक्रम हेतु पाठ्यवस्तु का विकास समन्वित रूप में करना चाहिए।

...आयाम के अनुरूप पाठ-योजनाओं को तैयार कराया जाए।

...यह आयाम अधिक जटिल तथा कठिन है, परन्तु इसके अभ्यास से सुगम और सरल बनाया ...सकता है।

...का निर्धारण, पाठ्यवस्तु व्यवस्था विशिष्ट अवधि हेतु की जाए। कालक्रम में विकास का ...किया जाए।

...समय तथा स्थान की दृष्टि से आर्थिक एवं सामाजिक विकास के अध्ययन एवं अध्यापन की ...की जानी चाहिए।

...में मानवीय विकास में आर्थिक, भौगोलिक, प्रशासनिक पक्षों के योगदान का अध्ययन ...जाए।

...आयाम को मानव-केन्द्रित बनाया जाए।

...विकास को सचयी आलेख के रूप में प्रस्तुत किया जाए।

(5) इकाई आयाम
(Unit Approach)

...(पद्धति) सामाजिक अध्ययन की विभिन्न शिक्षण विधियों में आधुनिकतम विधि है। ...के पश्चात् ही सामाजिक अध्ययन शिक्षण के क्षेत्र में इकाई विधि का सर्वाधिक प्रयोग

प्रोफेसर एच०सी० मोरीसन (Prof. H.C. Morrison) के अनुसार, "इकाई किसी वातावरण, कला, अथवा आचरण के वातावरण का व्यापक व महत्त्वपूर्ण अंग है, जिसको ज्ञान लेने से ... अनुकूलनीयता आती है।"

"A unit is a comprehensive and significant aspect of the environment of an organised science of an art or of conduct, which being learned results in an adaptation of personality."

हेना, हेगनिया तथा पोटर (Haina, Hageneia and Potter) ने अपनी पुस्तक 'Unit Teaching in Elementary School' में लिखा है, "इकाई की परिभाषा ऐसे उद्देश्यपूर्ण अनुभव के रूप में की जा सकती है जो सामाजिक महत्त्व की ऐसी सूझ-बूझ पर बल देता है, जो बाल के व्यवहार में परिवर्तन करके उसे जीवन की परिस्थितियों में अधिक प्रभावपूर्ण रूप से व्यवस्थित होने की योग्यता प्रदान करे।"

"A unt can be defined as a purposeful learning experience based upon some socially significant understanding which with modify the behaviour of the learner and to enable him to adjust to a life situation more effectively."

सी०वी० गुड (C.V. Good) के अनुसार, *"इकाई किसी पाठ्यक्रम, पाठ्य-पुस्तक, विषय, प्रयोगात्मक कलाओं तथा विज्ञानों का और विशेषकर सामाजिक अध्ययन का प्रमुख उपविभाजन है। यह ... क्रियाओं, अनुभवों तथा ज्ञान का किसी केन्द्रीय विषय, योजना तथा समस्या से सम्बन्धित ऐसा संगठन है जिसका विकास अध्यापक के नेतृत्व में बालकों के समूह द्वारा सहयोगपूर्ण ढंग से किया जाता है ... नियोजन, योजना की पूर्ति तथा परिणाम का मूल्यांकन सभी सम्मिलित है।"*

"Unit is a mojor sub-division of a course of study, a text-book or a subject field, particularly a sub-division of social studies partical arts or science. It is an theme, problem or purpose, developed cooperatively by a group of pupils teacher leadership. It involves planning, execution of plan and evaluation of results."

इकाई के प्रकार (Types of Unit)

जिस इकाई में किसी विशेष पहलू पर अधिक बल दिया हुआ हो, वह इकाई वैसे ही कहलाती है। चाहे कोई भी क्यों न हो उसमें अनेक पहलू होते हैं; जैसे—ज्ञान के साधन, प्रक्रिया, सौन्दर्य, मूल्य आदि, परन्तु उस इकाई में किसी एक पहलू पर बल अधिक होता है और दूसरे पहलू पर कम।

यदि इकाई में ज्ञान अर्जित करने पर बल दिया जाता है तो इकाई ज्ञानात्मक कहलाएगी और यदि सौन्दर्य पर आधारित है तो इकाई सौन्दर्यात्मक कहलाएगी और यदि इकाई में अनुभूतियों को अधिक ... इकाई भावात्मक कहलाएगी। इस विभाजन से तो इकाई अनेक प्रकार की हो सकती है, परन्तु वर्तमान में ... दो इकाइयों पर अधिक बल देते हैं—

(अ) स्रोत इकाई (Resource Unit) तथा

(ब) शिक्षण इकाई (Teaching Unit)

(अ) स्रोत इकाई (Resource Unit)—इस इकाई में किसी बड़े पाठ से सम्बन्धित शैक्षिक ... तथा क्रियाओं का संग्रह होता है। इनका निर्माण छात्रों के किसी समूह विशेष के लिए नहीं किया जाता। इसे तो एक स्तर के समस्त छात्रों के लिए बनायी जाती है।

(ब) शिक्षण इकाई (Teaching Unit)—शिक्षण इकाई का निर्माण अध्यानक द्वारा छात्रों के विशेष वर्ग के लिए किया जाता है। इसके निर्माण से अध्यापक स्रोत इकाई से पूरी सहायता लेता है। ... शिक्षण इकाई की रूप-रेखाओं का प्रश्न है, वह स्रोत इकाई के समान होती है। अध्यापक उपलब्ध ... प्रस्तुतियों के अनुसार स्रोत इकाई की रूप-रेखा में परिवर्तन करके शिक्षण के लिए इकाई की रूप रेखा तैयार कर लेता है।

...को बनाते समय निम्नांकित बातों को ध्यान में रखना चाहिए–

...बनाते समय कक्षा को ध्यान में रखना चाहिए। छोटी कक्षा के लिए बनायी जाने वाली इकाई ...बड़ी कक्षा के लिए इकाई बड़ी होनी चाहिए।

...न तो बहुत छोटी हो और न ही बहुत बड़ी। यदि बहुत विस्तृत है, तो छात्रों को विषय-वस्तु ...नहीं हो सकेगा। यदि वह बहुत छोटी है तो पूर्ण रूप से समझने के लिए पर्याप्त सामग्री प्राप्त ...हो सकेगी।

...बालकों की रुचियों, शक्तियों तथा समताओं के अनुरूप होनी चाहिए।

...ऐसी हो जो छात्रों को किसी निश्चित लक्ष्य की ओर अग्रसर करे।

...बड़ी इकाई का स्पष्टीकरण करने के लिए छोटी इकाइयों में बांट दिया जाना चाहिए।

...की योजना बनाते समय छात्रों का अधिक योगदान होना चाहिए, ऐसा उनसे पूछकर, उनके ...समस्या को रखकर और उनके सुझाव लेकर किया जा सकता है।

...अध्यापक को इन क्रियाओं की जो उनसे कक्षा में बच्चों से करवानी है, पूर्वयोजना करवानी ...चाहिए।

...में केवल वही सामग्री प्रदान करनी चाहिए, जिसका इकाई से सम्बन्ध हो और शिक्षार्थी ...समझने में सक्षम हो। यदि इस बात का ध्यान नहीं रखा जाता है तो विद्यार्थी तथ्य सामग्री को ...भूल-भुलैया में खो जाएगा। (A child will feel lost if there is a maze of factual ...material.) सामग्री ऐसी ही चुननी चाहिए, जो विद्यार्थियों की सूझ-बूझ में विस्तार करे।

...के गुण

...(Unit Approach)

...आयाम योजनाबद्ध और सम्बन्ध स्थापित करने में प्रशिक्षण देती है।

...इस में उचित योग्यताओं तथा रुचियों का भी विकास करती है। इस आयाम से छात्रों के ...समाजीकरण का विकास होता है।

...आयाम तर्कसंगत चिन्तन को विकसित करती है।

...आयाम में लचीलापन होता है। इसलिए व्यक्तिगत विभिन्नताओं को इसमें पूरा-पूरा ध्यान ...जा सकता है। इकाई पाठ की योजना का ज्ञान कराती है।

...आयाम में ज्ञान का विशिष्टीकरण नहीं होता, बल्कि पाठ्यक्रम को पूरी तरह सामान्य करके ...के सम्मुख रखा जाता है।

...में केवल अध्यापक का भाषण व पाठ्य-पुस्तक ही नहीं होती। दूसरी पूरक सामग्री का ...भी प्रयोग किया जाता है।

...आयाम के व्यक्तिगत रुचियों व समस्याओं की ओर ध्यान देती है। इसलिए सभी बालकों की ...प्रगति व सफलता पर बल नहीं देती। इस आयाम में बालक व्यक्तिगत विभिन्नता के ...अनुसार शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं।

...के दोष

...of Unit Approach)

...आयाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, यदि इसके लिए प्रशिक्षित शिक्षक उपलब्ध हों, लेकिन अभी ...अधिकतर सामाजिक अध्ययन के शिक्षकों को निर्माण और उनकी पूर्ति का पर्याप्त प्रशिक्षण ...नहीं है।

Unit-III

पाठ्यक्रम डिजाइन के प्रतिमान, उपागम एवं पैटन्‍र्स

(Model, Patterns and Approaches of Curriculum Design)

एक समय था जब शिक्षा के क्षेत्र में सीखने के सिद्धान्तों (Learning Theories) ... महत्त्वपूर्ण स्थान दिया जाता था। धीरे-धीरे अनुभव तथा शोध के आधार पर यह ज्ञात हुआ है ... सिद्धान्त शिक्षण की समस्याओं को सुलझाने में समर्थ नहीं है। इसलिए अब शिक्षाशास्त्री ... तकनीकी के सिद्धान्तों का प्रयोग करते हुए शिक्षण की प्रकृति को समझने का प्रयास कर रहे हैं ... 'शिक्षण के सिद्धान्तों का विकास' (Development of Teaching Theories) हो रहा है ... **क्रॉनबैक** (Cronback), **गेने** (Gane) आदि का नाम उल्लेखनीय है।

शिक्षण प्रतिमान की संकल्पना, अर्थ, परिभाषा तथा विशेषताएं (Concept, Meaning, Definition and Characteristics of Teaching Models)

अभी तक शिक्षण के क्षेत्र में ऐसे किसी भी शिक्षण सिद्धान्त (Teaching Theories) का ... गया है, जो स्वयं में पूर्ण हो और जिसे सर्वमान्य सिद्धान्तों की श्रेणी में रखा जा सके। शिक्षण ... of Teaching) ऐसे प्रयास अथवा व्यवस्थाएँ हैं, जो हमें शिक्षण सिद्धान्तों की ओर ले जा रहे हैं ... अपूर्ण शिक्षण सिद्धान्त भी कहते हैं। वास्तव में, ये प्रतिमान, शिक्षण सिद्धान्तों के निर्माण के ... सामग्री (Basic or Raw Material) तथा वैज्ञानिक आधार प्रस्तुत करते हैं।

प्रतिमान (Model)—प्रतिमान की परिभाषा करते हुए **कूम्ब** (Coombs and Asso... है—

"Model is an abstraction of the world......a model of the world which ... comparing its consequences to the observed data."

H.C. Wyld के अनुसार, *"प्रतिमान किसी आदर्श के अनुरूप व्यवहार को ढालने ... जाता है।"*

"To confirm in behaviour, action and the direct one's to according to some ... design or idea is called model."

भटनागर तथा **भटनागर** (1977) के अनुसार, *"शिक्षण या शिक्षण-अधिगम के ... व्यवहार की प्राप्ति के लिए किसी प्रारूप के अनुसार दी जाने वाली क्रिया प्रतिमान (Model) ...*

शिक्षण प्रतिमान (Models of Teaching)—शिक्षण प्रतिमान, शिक्षण सिद्धान्त ... कदम है। ये शिक्षण सिद्धान्तों को वैज्ञानिक आधार प्रदान करते हैं। ये स्वयं सिद्ध कल्पनाएं ...

है, जिनका प्रयोग शिक्षक अपने शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए करता है। **हायमन** (Hyman) के अनुसार, *"शिक्षण प्रतिमान शिक्षण के बारे में सोचने-विचारने की एक रीति है, जो वस्तु के अन्तर्निहित गुणों को परखने के लिए आधार प्रदान करती है। प्रतिमान किसी वस्तु को विभाजित तथा व्यवस्थित करके तार्किक रूप से प्रस्तुत करने की विधि है।"*

"The model is a way to talk and think about instruction in which certain facts be organised. classified and interpreted."

बी०आर० जॉयस (Brouce R. Joyce) ने शिक्षण प्रतिमानों को अनुदेशन प्रारूप (Instructional Designs) कहा है— *"शिक्षण प्रतिमानों में विशेष उद्देश्य की प्राप्ति के लिए विशिष्ट परिस्थितियों का उल्लेख किया जाता है जिसमें छात्र व शिक्षक मिलकर इस प्रकार कार्य करते हैं कि उनके व्यवहारों में परिवर्तन लाया जा सके।"*

"Teaching models are just instructional designs. They describe in process of specifying are producing particular environmental situations which causes the student to interact in such a way that specific change occurs in his behaciour."

जॉयस तथा **वेल** (Joyce and Weil) ने शिक्षण प्रतिमानों को शिक्षण प्रक्रिया के विशिष्टीकरण के सन्दर्भ में प्रयोग किया है, उनके अनुसार—

"Teaching model is comprehensive theoretical of learning and describing goals of learning, curriculum, setting and procedure. These are the different approaches to teaching and different kinds of strategy for teaching and learning."

भटनागर (1973) ने शिक्षण प्रतिमान की परिभाषा देते हुए लिखा है—

"Teaching model may be conidered as a combination of learning goals, environmental manipulations and other processes."

शिक्षण प्रतिमान, शिक्षण सिद्धान्तों (Theoies or Teaching) के Prototypes भी कहे जाते हैं क्योंकि ये शिक्षण सिद्धान्त निर्माण के लिए आवश्यक तत्त्व तथा प्रत्यय प्रदान करते हैं। शिक्षण प्रतिमानों का प्रयोग एक शिक्षक अपने शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए करता है।

प्रतिमान शब्द का प्रयोग किसी आदर्श (Ideal) के रूप में और किसी वस्तु के छोटे आकार के रूप में प्रयोग किया जाता है। किसी आदर्श को सामने लाकर छात्रों को इन आदर्शों का अनुकूलन द्वारा ग्रहण कराने का प्रतिमानों द्वारा प्रयास किया जाता है। दूसरी स्थिति में वस्तु के छोटे आकार को प्रतिमान के रूप में प्रयोग किया जाता है, जैसे कोई व्यक्ति किसी भवन, बाँध या प्रोजेक्ट का पहले उसका प्रतिमान (Model) बनाकर रूपरेखा तैयार करता है, उसकी कार्य-प्रणाली चैक करता है। फिर सब कुछ ठीक होने पर वास्तविक भवन, बाँध या प्रोजेक्ट प्रारम्भ करता है।

इसी प्रकार शिक्षण के क्षेत्र में भी कुशल शैक्षिक व्यवस्था के लिए शिक्षण-प्रारूप (Teaching Paradigm) बनाए जाते है, जिन्हें शिक्षण प्रतिमान (Teaching Model) कहा जाता है। शिक्षण प्रतिमान, शिक्षण के बारे में सोचने-विचारने, विचार-विमर्श के पश्चात एक निश्चित व्यवस्था के अनुकूल एक रीति, विधि अथवा ढंग है। (Teaching model is a way of thinking about teaching.)

पॉल डी० इंगन (Poul D. Eggen) के अनुसार, *"विशिष्ट अनुदेशनात्मक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए निर्मित उपचारात्मक शिक्षण व्यूह रचनाएँ (शिक्षण नीतियाँ) ही प्रतिमान है।"*

"Models are prescriptive teaching strategies designed to accomplish particular instructional goals."

एन०के० जंगीरा एवं **अजीत सिंह** (N. K. Jangira and Ajit Singh) ने शिक्षण प्रतिमानों की परिभाषा इस प्रकार दी है— *"शिक्षण प्रतिमान क्रमबद्ध एवं अन्तर सम्बन्धित तत्त्वों का वह समूह है जो निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए शैक्षिक क्रियाओं एवं वातावरणीय सुविधाओं की बनाने एवं उन्हें क्रियान्वित करने में सहायता करता है।"*

"A model of teaching is a set of inter-related components arranged in sequence to provides guidelines to realise goal. It helps in designing instructional activities environmental facilities, carry out of these activites and realization of the objectives."

जंगीरा एवं **सिंह** आगे लिखते हैं—

"The model has the support of a rationals justified by a viable theory. It tells what the models stands for and why purports to accomplish this. Empirical towards the workability of the models also contributes one of the requirments them."

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है, *"शिक्षण प्रतिमान शिक्षण प्रक्रिया में पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की हेतु, पूर्वनिर्धारित प्रारूप के अनुकूल विभिन्न शिक्षण क्रियाओं, विधियों, नीतियों, प्रविधियों अथवा युक्तियों एक मुक्त, गत्यात्मक, सुनियोजित बहुमुखी प्रक्रिया है, जिसके अन्तर्गत प्रेरक शैक्षिक वातावरण वांछित के साथ छात्रों में वांछित व्यवहार-परिवर्तन लाने का प्रयास करता है।"* (कुलश्रेष्ठ व सिंह, 19

शैक्षिक प्रतिमानों की विशेषताएँ
(Characteristics of Models of Teaching)

शैक्षिक प्रतिमानों के उपर्युक्त वितरण के आधार पर इनकी निम्नांकित विशेषताओं के दर्शन किए जा सकते हैं—

(1) शैक्षिक प्रतिमान उचित शैक्षिक वातावरण पैदा करने की विभिन्न विधियों पर प्रकाश डालते हैं।
(2) शैक्षिक प्रतिमान अपनी मान्यताओं के आधार पर अधिगम-अनुभवों की व्यवस्था करते हैं।
(3) शैक्षिक प्रतिमान छात्रों एवं शिक्षकों के मध्य अन्त:क्रिया (Interaction) को निर्देशित करते हैं।
(4) शैक्षिक प्रतिमान शिक्षक के लिए गाइड का कार्य करते हैं कि क्या पढ़ाएँ, किस कक्षा के लिए कौन-सी विषय-वस्तु व अनुदेशन सामग्री का चयन करें, कैसे पाठ का विकास करें, कौन-सी शिक्षण नीति, विधि या युक्तियों का प्रयोग करें तथा कैसे पाठ का विकास करें, कौन-सी शिक्षण नीति, विधि या युक्तियों का प्रयोग करें तथा कैसे छात्रों को उपलब्धि का मूल्यांकन करें।
(5) शैक्षिक प्रतिमान शिक्षण प्रक्रिया में पूर्ण सुधार लाने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं।
(6) प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान के निश्चित मूलभूत आधार होते हैं।
(7) ये शिक्षक और छात्रों दोनों को वांछित अनुभव प्रदान करते हैं।
(8) शिक्षण प्रतिमान छात्रों की रुचि का विनियोग करते हैं।
(9) शिक्षण प्रतिमान सामान्यतया शिक्षक के व्यक्तिगत मतों, दर्शन, चिन्तन तथा मूल्यों पर आधारित होते हैं।
(10) प्रत्येक प्रतिमान किसी-न-किसी प्रकार के दर्शन (Philosophy) से प्रभावित होता है।
(11) प्रत्येक प्रतिमान कुछ निश्चित शिक्षण सूत्रों का प्रयोग करता है (जैसे—ज्ञात से अज्ञात, स्थूल से सूक्ष्म या सरल से कठिन आदि)।
(12) शिक्षण प्रतिमान सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति पर ध्यान देते हैं और मानव योग्यता के विकास में सहायता देते हैं।
(13) ये दार्शनिक सिद्धान्तों तथा मनोवैज्ञानिक नियमों पर आधारित होते हैं।
(14) प्रतिमानों का विकास निरन्तर अभ्यास, अनुभव, साधना और प्रयोगों के पश्चात् होता है।
(15) शिक्षण प्रतिमान शिक्षण प्रक्रिया का व्यावहारिक पक्ष कहलाता है, जो शिक्षक के व्यक्तित्व में विकसित होता है।
(16) शिक्षण प्रतिमान, शिक्षण को एक कला के रूप में विकसित करने में पूर्ण सहायता देते हैं।

शिक्षण प्रतिमान, शैक्षिक क्रियाओं एवं वातावरण का निर्माण करने वाली एक रूपरेखा होती है।
शिक्षण प्रतिमान, विशिष्ट अनुदेशात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विशिष्ट एवं अधिगम की विधियों के निर्धारण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
ये शिक्षक के व्यक्तित्व की गुणात्मक उन्नति (Qualitative Development) करने की ओर प्रयत्नशील होते हैं।
ये शिक्षण-अधिगम सिद्धान्तों का आधार लेकर बनाए जाते हैं। (शिक्षण प्रतिमान तथा शिक्षण अधिगम सिद्धान्त, दोनों ही एक सिक्के के दो पहलू हैं।)
शिक्षण प्रतिमान कुछ निश्चित आधारभूत (Fundamental) प्रश्नों का उत्तर देने में समर्थ होते हैं।
यह तथ्यों का सुव्यवस्थित रूप है जिसके माध्यम से छात्रों को व्यवहार में परिवर्तन लाया जा सकता है।
शिक्षण प्रतिमान उन पर्यावरण परिस्थितियों की विशेष व्याख्या करते हैं, जिनमें छात्रों के प्रत्युत्तरों का निरीक्षण किया जाता है।
प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान बताता है कि अनुदेश अनुक्रम के पश्चात् छात्र क्या Perform करेंगे।
प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान की एक निश्चित व्यवस्था (Mechanism) होती है।
शिक्षण प्रतिमान मूल्यांकन के लिए मानदण्ड (कसौटी या Criteria) प्रस्तुत करते है।
शिक्षण प्रतिमान पूर्ण शिक्षण प्रक्रिया में सुधार लाने में सक्षम होते हैं।
शिक्षण प्रतिमान, अभ्यास एवं ध्यान (Attention) से विकसित होते हैं; अत: इनका आधार चिन्तन भी होता है।
शिक्षण प्रतिमान छात्रों की रुचि, स्तर तथा उनकी अन्य विशेषताओं का प्रयोग करते हैं।
शिक्षण प्रतिमान शिक्षण को एक कला के रूप में विकसित करने में सहायक होते हैं।

शिक्षण प्रतिमान एवं शिक्षण नीतियाँ
(Modles of Teaching and Teaching Strategies)

प्रतिमानों और शिक्षण नीतियों का एक ही प्रकार का कार्य है। एक शिक्षण इन दोनों माध्यमों का उद्देश्य के अनुसार शैक्षिक वातावरण उत्पन्न करता हैं। शिक्षण की प्रक्रिया एक अनिवार्य क्रिया है। केवल नीति निर्धारित करती है। शिक्षण के मूल्यांकन से इनका कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं होता। में मूल्यांकन की प्रक्रिया बहुत महत्त्वपूर्ण क्रियाओं में से एक है। यह प्रत्येक प्रकार के प्रतिमानों का तथा अनिवार्य तत्त्व होता है। शिक्षण प्रतिमान में मूल्यांकन प्रणाली को Support System कहा जा सकता है कि शिक्षण प्रतिमान, शिक्षण नीतियों से अपेक्षाकृत अधिक व्यापक होते है।
प्रतिमान अनुभवों एवं प्रयोगों के निष्कर्ष कहे जाते हैं। इनके प्रारूप में निम्नांकित क्रियाएँ होती है–

वांछित व्यवहार या निष्पत्ति को व्यावहारिक रूप प्रदान करना।
तथा समुचित उद्दीपनों का चयन करना, जिससे छात्र वांछित अनुक्रियाएँ कर सकें।
परिस्थितियों का विशेषीकरण करना। (जैसे मूल्यांकन अथवा पृष्ठपोषण के माध्यम से छात्रों की अनुक्रियाओं के विषय में ज्ञात प्राप्त हो सके।)
व्यवहार या मूल्यांकन के मानदण्ड निर्धारित करना।
छात्र और शिक्षण के मध्य अन्त:प्रक्रिया की परिस्थितियों के लिए शिक्षण युक्तियों का तथा विशिष्टीकरण करना।
शिक्षण नीतियों, युक्तियों तथा प्रतिमानों में सुधार करना (व्यवहार संशोधन

शिक्षण प्रतिमानों की मान्यताएँ
(Assumptions of Teaching Models)

शिक्षण प्रतिमानो की प्रमुख मान्यताएँ निम्नलिखित हैं–

(1) शिक्षण प्रतिमान प्रभावशाली रूप से सीखने के लिए उपर्युक्त वातावरण निर्माण
सफल साधन है।

(2) शिक्षण प्रतिमान सीखने के अनुभवों के लिए वास्तविक तथा व्यावहारिक
प्रदान करते हैं।

(3) प्रत्येक प्रतिमान, शिक्षण की सफलता के लिए अनेक शिक्षण नीतियों, विधियों
प्रयोग करता है।

(4) प्रत्येक प्रतिमान, शिक्षक और छात्रों के मध्य अन्त:प्रक्रिया बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील
शिक्षण प्रक्रिया को सक्रिय बनाता है।

शिक्षण प्रतिमान के तत्त्व
(Elements of Teaching Models)

प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान में निम्नलिखित चार आधारभूत तत्त्व होते हैं–

(1) लक्ष्य या उद्देश्य (Focus)–प्रत्येक शिक्षण प्रतिमान का एक निश्चित उद्देश्य अथवा
उस प्रतिमान का केन्द्र-बिन्दु (Focus) कहा जाता है। ये केन्द्र-बिन्दु शिक्षण के उद्देश्यों तथा लक्ष्यों
होते हैं और उसी प्रकार की क्षमताओं तथा योग्यताओं के विकास के लिए प्रयत्नशील रहते हैं।

(2) संरचना (Syntax)–संरचना से अभिप्राय शिक्षण प्रतिमानों के उन बिन्दुओं से है, जो
विभिन्न अवस्थाओं (Phases) में निर्धारित लक्ष्यों या उद्देश्यों के अनुसार केन्द्रित क्रियाएँ उत्पन्न
शब्दों में शिक्षण प्रतिमान की संरचना से यह पता चलता है कि शिक्षण कि क्रियाओं, नीतियों,
अन्त:क्रियाओं को किस प्रकार से क्रमबद्ध किया जाना चाहिए, ताकि वांछित उद्देश्यों को प्राप्त
यह विषय-वस्तु के प्रस्तुतीकरण में सम्बन्धित हैं।

*"It involves a discription or structure of teaching activities during different
teaching."*

संरचना के प्रतिमान के विभिन्न पर (Step), भिन्न-भिन्न क्रियाओं के विभिन्न पक्षों या
सम्बन्ध स्थापित करते हैं।

*"The syntax refers to the structure of phasing of the model i.e., kinds of
will like to organise at well defind stages of the whole teaching programme."*

(3) सामाजिक **प्रणाली** (Social System)–प्रत्येक प्रतिमान की अपनी एक सामाजिक
है, जो हमें बनाती है कि छात्र और शिक्षकों के मध्य क्रिया तथा अन्त:क्रिया का आयोजन किस
जाना चाहिए, जससे कि छात्रों के वयवहार पर नियन्त्रण रहे। साथ ही उनमें वांछित परिवर्तन
सामाजिक प्रणाली हमें अभिप्रेरणा देने वाली प्रविधियों के बारे में भी बताती है। प्रत्येक प्रतिमान
कोई-न-कोई एक निश्चित प्रकार की सामाजिक प्रणाली अवश्य होनी चाहिए जिससे कि
सुचारु रूप से चलती रहे।

(4) मूल्यांकन **प्रणाली** (The Support System)–एक विद्वान के अनुसार– *"The
is the most important summary variable that operates and determines
teaching."*

मूल्यांकन प्रणाली शिक्षण प्रतिमान का चौथा महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। इसके द्वारा हमें यह
शिक्षण उद्देश्य हमने किस सीमा तक प्राप्त किए हैं और छात्रों के व्यवहारों में परिवर्तन कहाँ तक

इस प्रकार से यह प्रणाली शिक्षण की सफलता या असफलता की कथा कहती है। दूसरे शब्दों में शिक्षण की प्रभाविता की जाँच कर, उनमें सुधार और परिवर्तन लाने की प्रक्रिया ही मूल्यांकन प्रणाली कहलाती है। विभिन्न प्रकार के प्रतिमान, विभिन्न प्रकार के मूल्यांकन प्रणाली के बारे में अपने लक्ष्य के अनुसार दिशा-निर्देश प्रदान करते हैं।

शिक्षण प्रतिमानों का निर्माण तथा विकास (Developing Models of Teaching)

शिक्षण प्रतिमानों का निर्माण तथा विकास कार्य अभी शैशवावस्था में ही है; अत: शिक्षक को अपने शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए काफी चिन्तन करना चाहिए। विकास मनोविज्ञान, सामाजिक सिद्धान्त, विभिन्न क्षेत्रों में व्यवहार संशोधन तथा प्रणाली उपागम आदि के माध्यम से एक निश्चित प्रतिमान की ओर बढ़ा जा सकता है। ये प्रतिमान निश्चित रूप से शिक्षण तथा पाठ्यक्रम दोनों को एक नई दिशा प्रदान करेंगे तथा इन दोनों को ज्यादा समीप लाएँगे।

"*Models of teaching build up an optional relationship among educational objectives, curriculum design, instructional strategy as one ot one relationship. They are in balance when they support the same educational ends.*"

(Joyce and Weil] 1972)

भारतवर्ष में शिक्षण प्रतिमानों के क्षेत्र में डॉ० पी० एन० दवे का नाम उल्लेखनीय है, जिन्होंने इन प्रतिमानों के निर्माण की ओर कदम बढ़ाया है।

शिक्षण प्रतिमान परिवार (Families of Models of Teaching)

विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न प्रकार से शिक्षण प्रतिमान के परिवारों की कल्पना की है। **जॉन० पी० डिसेको** (John P. Dececco) ने शिक्षण प्रतिमानों का वर्गीकरण चार मूलभूत मनोवैज्ञानिक वर्गों या परिवारों में किया है।

शेफलर (Schefler) ने इन प्रतिमानों के तीन परिवारों के विषय में अपनी व्यवस्था दी है। **मार्श वील** (Marsh Will) आदि ने समस्त मॉडलों को तीन प्रमुख वर्गों या परिवारों में विभाजित किया है, वे हैं–

(1) सूचना प्रक्रिया प्रतिमान परिवार। (2) सामाजिक प्रतिमान परिवार।
(3) व्यक्तिगत प्रतिमान परिवार।

ट्रेवर्स (Travers) ने इन सभी शिक्षण प्रतिमानों को अपनी व्यवस्थानुसार तीन परिवारों में विभक्त किया है। सर्वाधिक प्रचलित विवरण **जॉयस तथा वील** (Joyce and Will) ने दिया है। इन्होंने 20 से भी अधिक प्रतिमान विकसित किए हैं। इन प्रतिमानों को उनकी प्रमुख विशेषताओं एवं प्रकृति के आधार पर (कि वे कैसे शिक्षण के लक्ष्यों एवं साधनों से समन्वय स्थापित करते हैं) प्रमुख चार परिवारों में विभाजित किया है; वे हैं–

शिक्षण प्रतिमानों के परिवार (Families of Models)

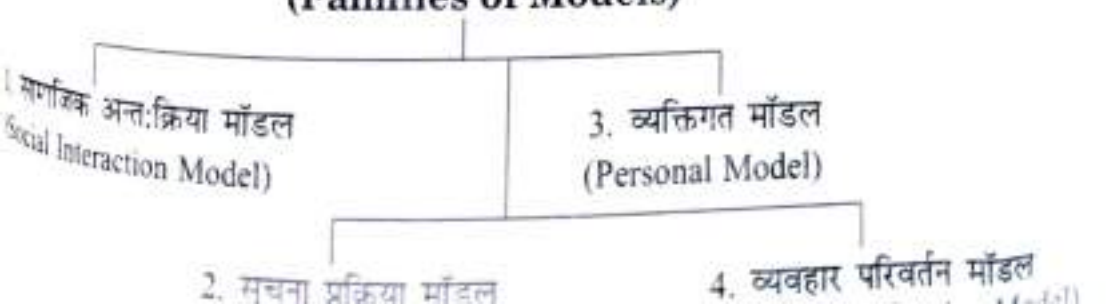

एक अन्य विद्वान के अनुसार, शिक्षण प्रतिमानों के परिवार (Families) छोटे-बड़े ... अधोंकित चार्ट के द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा है–

डॉ० एस०एस० माथुर ने इन शिक्षण प्रतिमानों के चारों वर्गों अथवा चारों परिवारों का ... शब्दों में प्रस्तुत किया है–

(1) सामाजिक अन्त:क्रिया मॉडल (Social Interaction Model)–यह मॉडल ... साथ सम्बन्धों पर बल देता है। यह उस प्रक्रिया पर ध्यान केन्द्रित करते हैं जिसके द्वारा ... सामाजिकता के द्वारा की जाती है। वह मॉडल व्यक्ति की इस योग्यता में सुधार पर बल देता है ... दूसरों के साथ अच्छे सम्बन्ध बनाने की है। वह जनतान्त्रिक क्रियाओं में सुधार लाने तथा ... बनाने की योग्यता पर बल देते हैं। किन्तु यह मॉडल केवल सामाजिक सम्बन्धों के उद्देश्य ... रखता वरन् व्यक्ति के मन और आत्मा के विकास को तथा पाठ्य-विषयों को सीखने को ...

(2) सूचना क्रियाविधि मॉडल (Information Processing Model)–यह परिवार ... विद्यार्थियों की सूचना क्रियाविधि की क्षमता बढ़ाने पर तथा उस व्यवस्था पर, जो यह क्षमता ... क्रियाविधि संकेत देती है उन प्रकारों का, जो व्यक्ति अपनाते हैं। वातावरण से प्राप्त ... लिए, प्रदत्त सामग्री को संगठित करने के लिए समस्याओं को जानने के लिए, समस्याओं का ... लिए तथा मौखिक एवं अमौखिक चिह्नों के उपयोग के लिए। कुछ मॉडल व्यक्ति की ... योग्यता से मतलब रखते हैं और इस प्रकार उत्पादक चिन्तन पर बल देते हैं जबकि कुछ ... बुद्धि योग्यता पर बल देते हैं। कुछ उन शिक्षण विधियों पर बल देते हैं जो कि शिक्षण विषयों ... हैं। यह मॉडल सामाजिक सम्बन्धों पर भी ध्यान देता है।

(3) व्यक्तिगत मॉडल (Personal Model)–मॉडल का तीसरा परिवार व्यक्ति ... रखता है और यह आत्म-सम्बन्धी विकास की ओर केन्द्रित होता है। यह उस प्रक्रिया पर ... द्वारा व्यक्ति अपनी विशेष स्थिति में बनाते हैं और संगठित करते हैं। बहुधा वह व्यक्ति के ... बल देता है। आशा की जाती है कि यदि व्यक्तियों को अपने वातावरण के साथ उत्पादक ... उनको अपने आपको योग्य व्यक्ति समझने में सहायता दी जाए तो अच्छे अन्त:व्यक्तिगत ... अधिक प्रभावशाली ज्ञान प्राप्त करने की प्रक्रिया में कुशलता प्राप्त होगी।

(4) व्यक्तिगत रूपान्तर मॉडल (Behaviour Modification Model)–चौथे प्रकार ... विकास उन प्रयासों के आधार पर हुआ है जो सीखने के कार्यों की क्रमशीलता के लिए ... विकास हेतु किए गए हैं एवं व्यवहार के समबन्ध में, जो निहित है एवं दीखने वाली नहीं है। ... जसे ऑपरेण्ट अनुबन्धन कहते हैं, उसका प्रयोग अनेक क्षेत्रों में किया जाता है यथा शिक्षा ... फौजी प्रशिक्षण से लेकर रोगी उपचार तक के हैं।

ऊपर जिन मॉडला परिवारों का वर्णन किया गया वे एक-दूसरे से विलग नहीं है। ... परिवारों से होते हैं फिर भी बहुत कुछ एक-से ही उपायों पर बल देते हैं। इसके अतिरिक्त ... मॉडलों में बहुत-सी उन्हें विभिन्न व्यक्ति विभिन्न अर्थ देते हैं। इस संदर्भ में हम कह सकते ... जो हम करते हैं वह व्यक्तिगत ही होता है। इसी प्रकार से अधिकतर हमारे अनुभव, विशेषकर ... कुछ बौद्धिक अथवा ज्ञान प्राप्त करने सम्बन्धी होते हैं।

शिक्षण देने में कुशलता में वृद्धि शिक्षण के मॉडलों पर प्रभुत्व करना कहा जा सकता है ... में प्रभावशाली ढंग से मॉडलों को प्रयोग करने की योग्यता बढ़ जाती है तो उसकी कुशलता ... उत्तम अध्यापक शिक्षण के ...

शिक्षण प्रतिमान
(Models of Teaching)

ऐतिहासिक शिक्षण प्रतिमान (Historical Models of Teaching)

i) सुकराती शिक्षण प्रतिमशन (Historical Models of Teaching)

ii) परम्परागत मानवीय शिक्षण प्रतिमान (Classical Humanistic Model)

(iii) व्यक्तिगत विकास शिक्षण प्रतिमान (Personal Development Model of Teaching)

2. मनोवैज्ञानिक शिक्षण प्रतिमान (Phychological Models of Teaching)

(i) मौलिक शिक्षण प्रतिमान (Basic Teaching Model)

(ii) कम्प्यूटर पर आधारित शिक्षण प्रतिमान (A Computer Based Teaching Model)

(iii) विद्यालय अधिगम शिक्षण प्रतिमान (A Teaching Model for School Learning)

(iv) अन्त:प्रक्रिया शिक्षण प्रतिमान (An Interaction Model of Teaching)

3. शिक्षण प्रशिक्षण प्रतिमान (Teaching Models for Teacher's Training & Education)

(i) टाबा शिक्षण प्रतिमान (Taba's Model of Teaching)

(ii) टर्नर का प्रतिमान (Turner's Model of Teaching)

(iii) शिक्षक अभिविन्यास विषमता प्रतिमान (A Model of Variation in Teacher Orientation)

(iv) फॉक्स लिपिट प्रतिमान (The Fox Lippitt Model of Teaching)

4. आधुनिक शिक्षण प्रतिमान (Modern Teaching Models)

(i) सामाजिक अन्त:प्रक्रिया मॉडल (Social Interaction Models)

(ii) सूचना प्रक्रिया मॉडल (Information Process Models)

(iii) व्यक्तिगत स्रोत मॉडल (Personal Source Models)

(iv) व्यवहार परिवर्तन माडल (Behaviour Modification Models)

(Importance and Utility of Teaching Models)

शिक्षण प्रतिमान, शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। प्रतिमानों का महत्त्व इस प्रकार है–

(1) ये प्रतिमान शिक्षण व्यवस्था को उन्नत बनाने के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक हैं। ये शिक्षण को अधिक सार्थक, उद्देश्यपूर्ण तथा प्रभावशाली बनाते हैं।

(2) ये प्रतिमान, कक्षा-शिक्षण में सुधार लाते हैं और उपर्युक्त वातावरण का निर्माण कर व्यवहारों में वांछित परिवर्तन करने में सफल होते हैं।

(3) प्रतिमानों के माध्यम से शैक्षिक प्रक्रिया में शृंखलाबद्धता तथा पूर्णता रहती है, जिससे क्रियाएँ अधिक क्रमबद्ध तथा सुव्यवस्थित हो जाती हैं।

(4) विद्यालयों के विभिन्न विषयों के शिक्षण के आवश्यकतानुसार विशिष्ट प्रतिमानों का प्रयोग कर उत्तम शिक्षण प्रदान किया जा सकता है।

(5) शैक्षिक प्रतिमान, शिक्षण के वैज्ञानिक, नियन्त्रित तथा उद्देश्य-निर्देशित बनाते हैं, जिससे व्यवहारों में परिवर्तन लाना सहज हो जाता है।

(6) शिक्षण प्रतिमानों के आधार पर विभिन्न शिक्षण सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जाता है।

(7) शिक्षण-प्रतिमान, शिक्षक को शिक्षण-प्रक्रिया में अनुसंधान कार्य के लिए विशाल क्षेत्र प्रदान करते हैं। यह नए आयाम तथा नए क्षेत्र प्रस्तुत करते हैं।

(8) शिक्षण-प्रतिमान, के द्वारा शिक्षण एवं अधिगम क्रियाओं के सम्बन्ध में विभिन्न शैक्षिक तथ्यों तथा विभिन्न परिस्थितियों का भी अध्ययन करना सम्भव है।

(9) शिक्षण-प्रतिमान के ज्ञानात्मक, व्यावहारिक एवं व्यक्तिगत विकास की सम्भावनाओं को ...

(10) शैक्षिक प्रतिमान पाठ्य-सामग्री को भौतिक लक्ष्यों की प्राप्ति का महत्त्वपूर्ण साधन मानते हैं।

(11) इन प्रतिमानों का प्रयोग करके भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल नवीन प्रतिमानों का ... सम्भव हो सकता है।

(12) शिक्षण के किसी एक या अधिक विशिष्ट उद्देश्य को प्राप्त करने में सहायक होते हैं।

(13) ये व्यावहारिक प्रकृति के होते हैं और उनके द्वारा अधिगम उपलब्धि होती है।

(14) शिक्षण के क्षेत्र में विशिष्टीकरण की प्रक्रिया को बल प्रदान करते हैं।

(15) छात्रों में वांछित व्यवहार परिवर्तन के लए उपयुक्त उद्दीपकों के चयन में सहायक होते हैं।

(16) ये विभिन्न शिक्षण नीति, युक्ति तथा प्रविधियों के प्रयोग के लिए निर्देश देते हैं।

(17) प्रत्येक प्रतिमान मूल्यांकन का एक विशिष्ट मानदण्ड प्रस्तुत करता है।

(18) ये शिक्षण में परिवर्तन कर सुधार लाते हैं।

पाठ्यक्रम विकास के विशिष्ट प्रतिमान

(Special Models of Curriculum Development)

इस अध्याय में पाठ्यक्रम के प्रतिमान तथा आयामों का विवेचन किया गया है। पाठ्यक्रमों के प्रतिमानों का वर्गीकरण भी दिया गया है। इस विभाजन से अलग भी कुछ विशिष्ट प्रतिमान विकसित किए गये हैं। **वाई० सरन** तथा **हिल्दा तबा** के प्रतिमान अधिक विख्यात हैं; अतः यहाँ पर इन दोनों को विशिष्ट प्रतिमान माना गया है और उनका संक्षिप्त विवरण दिया गया है–

(I) सरन पाठ्यक्रम प्रतिमान
(Saran Curriculum Model as Output)

प्रतिमान को **वाई० सरन** ने (1976) ई० में विकसित किया, यह पाठ्यक्रम प्रतिमान अधिक प्रचलित है। इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि इसका विकास प्रणाली विश्लेषण के माध्यम से हुआ। इसमें के प्रमुख पक्षों को आधार माना गया। आज के तकनीकी के युग में पाठ्यक्रम का प्रारूप भी इसमें रहा। इसमें विशिष्ट उद्देश्यों को प्राथमिकता दी जाती है। अदा, प्रदा तथा प्रक्रिया पक्षों का विश्लेषण विकास एवं सुधार किया जाता है। इसकी प्रमुख अवधारणाएं हैं—

कोई पाठ्यक्रम अपने में पूर्ण नहीं है, उसमें सुधार एवं विकास की आवश्यकता होती है।

कोई नया पाठ्यक्रम भी पूर्ण नहीं हो सकता है अपितु प्रचलित पाठ्यक्रम की कठिनाइयों का निदान सुधार करने से पाठ्यक्रम का सुधार 'प्रणाली विश्लेषण' (System Analysis) से करना अधिक रहता है।

के प्रमुख पक्ष

प्रतिमान के तीन पक्ष होते हैं जो तकनीकी से लिये गये हैं—(1) अदा (Input), (2) प्रदा (Output) प्रक्रिया (Process)। इस प्रतिमान में प्रदा (Output) को प्राथमिकता दी जाती है।

अदा (Input)—प्रतिमान के इस पक्ष को तीन घटाकें में बाँटा है—(अ) पाठ्यवस्तु के स्रोत, तथा विशेषज्ञों की विचारधारा, (ब) उद्देश्यों का प्रतिमान करना तथा पाठ्यवस्तु का चयन करना पाठ्यक्रम का प्रारूप विकसित करना। इस पक्ष के अन्तर्गत आवश्यकता, विशेषज्ञों की राय के आधार को ज्ञात किया जाता है। आवश्यकता के आधार पर उद्देश्यों की पहिचान करके उनका प्रतिपादन उद्देश्यों के अनुरूप पाठ्यवस्तु का चयन किया जाता है। उद्देश्यों एवं पाठ्वस्तु की सहायता से का प्रारूप विकसित करते हैं।

सरन पाठ्यक्रम प्रतिमान
(Curriculum Model as Input)
(By Y. Saran)

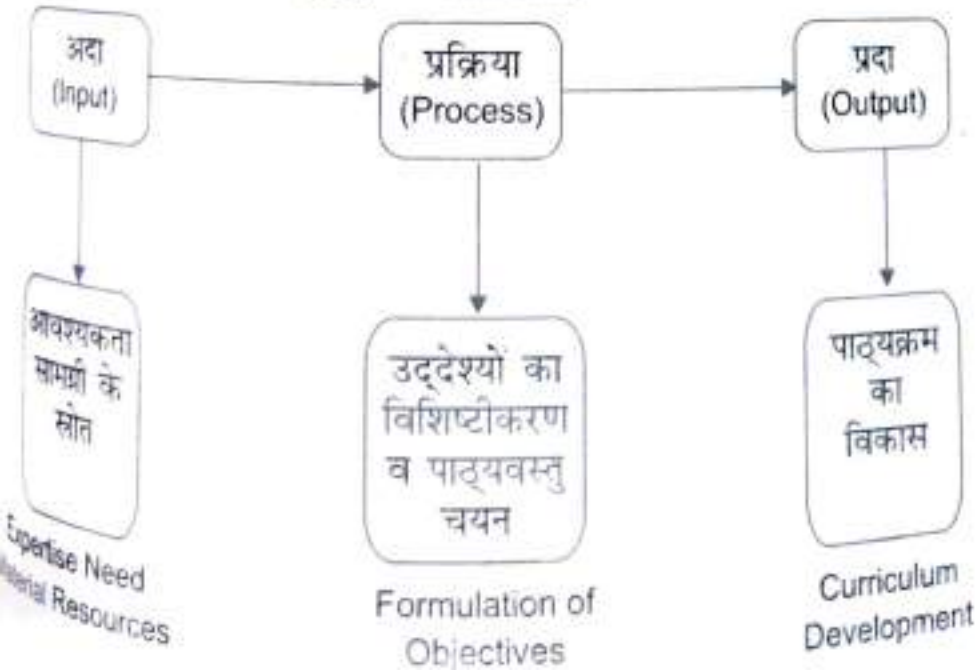

(2) **प्रदा** (Output)—पाठ्यक्रम के प्रारूप के लिए अदा की भूमिका महत्वपूर्ण है, उतना महत्वपूर्ण है क्योंकि पाठ्यक्रम सीखने के अनुभवों की व्यवस्था का स्वरूप प्रस्तुत अपेक्षित उद्देश्य प्राप्त किये जाते हैं। इसके अन्तर्गत कई कारक होते हैं परन्तु मूल्यांकन जाता है। मूल्यांकन प्रक्रिया उद्देश्य-केन्द्रित होती है। इसके दो प्रमुख कार्य होते हैं—प्रथम सके कि उद्देश्य प्राप्त हुए हैं अथवा नहीं हो सके। द्वितीय यह भी विदित हो जाता है यदि क्या कारण रहा। मूल्यांकन प्रक्रिया निदानात्मक होती है। प्रणाली विश्लेषण प्रयुक्त किया पाठ्यक्रम के सुधार हेतु दिशा भी मिल जाती है।

सरन प्रतिमान के सोपान
(Steps for Saran Model)

अदा, प्रदा तथा प्रक्रिया के सम्पादन हेतु नौ सोपानों का अनुसरण किया जाता है, वे इस प्र

(1) आवश्यकता के मूल्यांकन हेतु सर्वेक्षण (Survey for Need Assessment),

(2) भावी आवश्यकताओं के लिए मूल्यांकन (Assessment for future needs),

(3) उद्देश्यों को पहिचानना (Identification of objectives),

(4) उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना (Formulation of Behavioural Objec

(5) पाठ्यवस्तु का चयन (Selection of Content),

(6) मूल्यांकन प्रणाली का प्रारूप (Design of Evaluation System),

(7) स्रोतों का विकास (Resources of Development),

(8) जाँच करना (Try out) तथा

(9) समीक्षा करना (Review)।

इस पाठ्यक्रम प्रतिमान में उद्देश्यों को अधिक महत्त्व दिया गया है, इसलिए यह प्रतिमान आयाम के अधिक समीप है। शिक्षा में उद्देश्यों को ही प्राथमिकता दी जाती है, इसलिए इस प्रतिमान तथा उनके विशिष्ट रूप को ही महत्त्व दिया गया है। इन सोपानों का संक्षिप्त विवरण नीचे दि

(1) आवश्यकता **के** मूल्यांकन **हेतु सर्वेक्षण** (Survey for Need Assessment)—पिछले पाठ्यक्रम के विभिन्न आधारों का उल्लेख किया गया है—दार्शनिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक आदि। अत: सर्वप्रथम आवश्यकता यह होती है कि बालकों की आवश्यकताओं, समाज, राष्ट्र का सर्वेक्षण किया जाए। सामाजिक परिवर्तन को भी ध्यान में रखा जाए। सामाजिक नई प्रवृत्तियों किया जाए। सामाजिक दर्शन और सामाजिक आवश्यकताओं के लिए सर्वेक्षण किया जाता है साक्षात्मार निरीक्षण तथा प्रश्नावली आदि प्रविधियों को प्रयुक्त किया जाता है, वस्तुनिष्ठ रूप से की परख की जाती है।

(2) **भावी** आवश्यकताओं **के लिए** मूल्यांकन (Assessment for future needs)—पाठ्यक्रम का नियोजन भावी नागरिकों को तैयार करने के लिए दिया जाता है। शिक्षा सदैव भावी समाज की तैयारी करती है। भावी जीवन की तैयारी हेतु, भावी राष्ट्र और समाज की आवश्यकताओं लगाया जाता है और उनकी परख भी की जाती है। नई शिक्षा नीति (1986) में राजीव गांधी ने यह थी कि 21वीं शताब्दी के लिए नागरिक तैयार करने हेतु शिक्षा का प्रारूप विकसित किया जाए। जिस आज विद्यालय में प्रवेश दिया गया है वह 20 वर्ष बाद शिक्षा पूरी करके समाज में नितान्त अ इसमें सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक परिवर्तन की प्रवृत्ति के आधार पर भविष्य की आवश्यकताओं किया जाता है। भविष्य की आवश्यकताओं की परख करना आवश्यक होता है क्योंकि पाठ्यक्रम भावी आवश्यकताएँ होती हैं।

...उद्देश्यों को पहचानना (Identification of objectives)—शिक्षा एक सोद्देश्य प्रक्रिया है इसलिए ... किन्हीं उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विकसित किया जाता है। बालक के ज्ञानात्मक, भावात्मक, तथा शारीरिक विकास को महत्त्व दिया जाता है और सन्दर्भ बिन्दु समाज और राष्ट्र की भावी ...आवश्यकताएँ होती हैं। विकसित के स्वरूप में पाठ्यवस्तु सहायक होती है। पाठ्यवस्तु के स्वरूप ...निर्धारित करता है। अत: उद्देश्यों की पहचान के प्रमुख आधार अधोलिखित है—

- समाज तथा राष्ट्र की भावी आवश्यकताएँ,
- बालक की आवश्यकताएँ,
- बालक के विकास क्रम और उसकी विशेषताएँ तथा
- पाठ्यवस्तु की प्रकृति तथा स्वरूप।

सरल पाठ्यक्रम प्रतिमान (अदा प्रणाली का रूप)
[Saran Curriculum Model (As a Input System)]

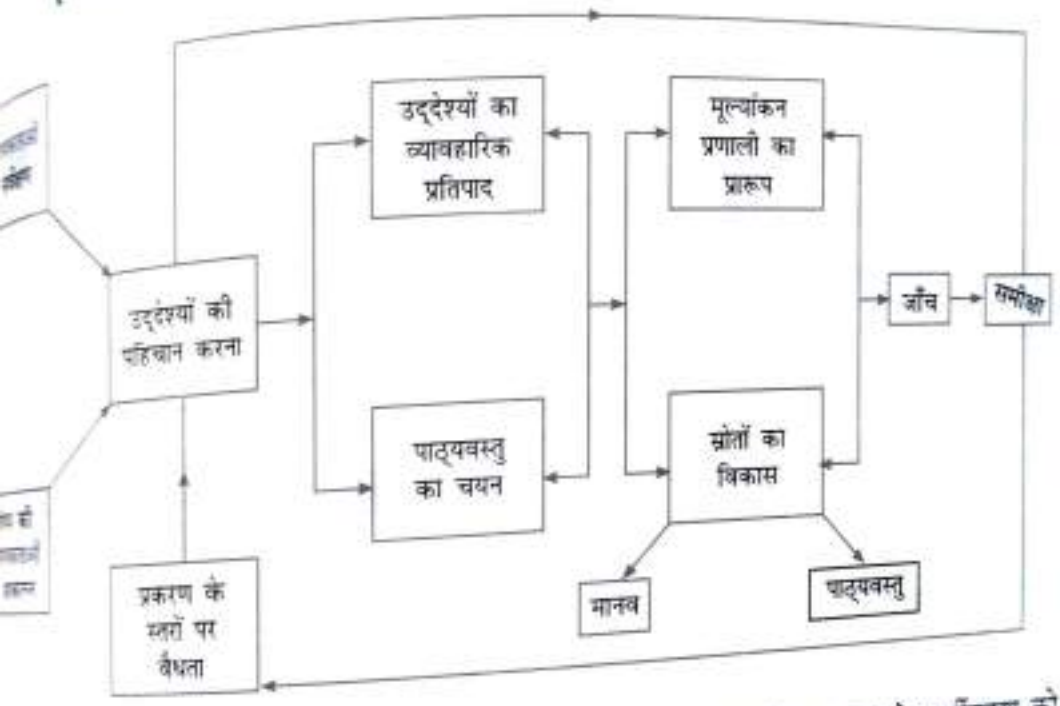

...तथ्यों को ध्यान में रखकर उद्देश्यों की पहिचान की जाती है। इसके लिए ब्लूम के वर्गीकरण को ...किया जाता है।

(4) उद्देश्यों को व्यावहारिक **रूप में लिखना** (Formulation of Behavioural Objectives)—प्रदा... बालक के विकास भी उनमें अपेक्षित ...लिए बालकों का व्यवहार-परिवर्तन की आधार होता है। ...परिवर्तन द्वारा किया जाता है। शिक्षक पाठ्यवस्तु की सहायता से ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करता है ...अनुभवों एव क्रियाओं द्वारा अपेक्षित व्यवहार सीख लेता है। इसलिए प्रक्रिया स्तर पर व्यावहारिक ...अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं। उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखने के लिए मेगर की विधि या ...विधि को प्रयुक्त कर सकते हैं। इसके तीन तत्त्व होते हैं—(अ) उद्देश्य (वर्ग) के रूप में, (ब) ...का स्वरूप अथवा तत्त्व तथा (स) उद्देश्य हेतु क्रिया। अनुक्रिया तथा मानसिक प्रक्रिया। उद्देश्यों को ...रूप में लिखने से शिक्षण अधिगम क्रियाएँ सुनिश्चित हो जाती हैं। मापन तथा मूल्यांकन करना भी ...सुगम हो जाता है। व्यवहार-परिवर्तन ही मूल्यांकन के मानदण्ड होते हैं।

(5) **पाठ्यवस्तु का चयन** (Selection of Content)—पाठ्यवस्तु का स्वरूप वृहद् होता है। शिक्षा के ...स्तरों पर पाठ्यवस्तु एक ही होती है, परन्तु उनका स्वरूप अलग-अलग होता है। एक ही पाठ्यवस्तु का